फरवरी-२०१८ ◆ वर्ष ६ ◆ अंक ०१ ◆ उदयपुर

ओ३म्

# सत्यार्थ सौरभ

मासिक

फरवरी-२०१८

**मत सेवन करो तम्बाकू का, अरु धूम्रपान का त्याग करो।**
**व्यसन-मुक्ति हो लक्ष्य सभी का, सत्यार्थ प्रकाश स्वाध्याय करो॥**

विश्व कैंसर दिवस

शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति को समर्पित


**श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास**
नवलखा महल परिसर, गुलाब बाग, महर्षि दयानन्द मार्ग,
उदयपुर-313001 (राज.)

₹ १० (७४)

एक सम्पूर्ण उपहार
हर अवसर के लिए
आठ एअर टाइट डिब्बों वाली मसाले दानी (मसाले सहित)
का गिफ्ट पैक हर अवसर पर उपहार में देने के लिए उत्तम।
उपहार पाने वाला आपको और एम डी एच मसालों की
खुशबू और स्वाद को हमेशा याद करता रहेगा।
यह मिठाई से सस्ता और शुद्धता से भरपूर है।
MDH
Assorted Spices Box
MDH
Assorted Spices Box
GIFT PACK
गिफ्ट पैक
की कीमत सिर्फ
550/- रू०
MDH
मसाले
असली मसाले
सच - सच
Garam masala
Kitchen King
Chana masala
DEGGI MIRCH
Chunky Chat masala
HALDI POWDER
LAL MIRCH POWDER
DHANIA POWDER
मिलने में असुविधा होने पर कृप्या सम्पर्क करें
महाशियाँ दी हट्टी (प्रा०) लिमिटेड
9/44, कीर्ति नगर, नई दिल्ली - 110015, 011 - 41425106 - 07 - 08
ESTD. 1919
E-mails : mdhcare@mdhspices.in, delhi@mdhspices.in www.mdhspices.com

सत्यार्थ प्रकाश की शिक्षाओं को अपने आँचल में समेटे, सम्पूर्ण परिवार के लिए, हर आयु समूह के लिए, पठनीय और समर्पित

न्यास का मासिक मुखपत्र

# सत्यार्थ सौरभ


**प्रमुख संरक्षक - सत्यार्थ सौरभ**

महाशय धर्मपाल जी ( एम.डी.एच. )
डॉ. सुखदेव चन्द सोनी ( अमेरिका )

**परामर्शदाता संपादक मण्डल**

डॉ. महावीर मीमांसक
आचार्य वेदप्रकाश श्रोत्रिय
डॉ. ज्वलंत कुमार शास्त्री
डॉ.सोमदेव शास्त्री
डॉ. रघुवीर वेदालंकार
आचार्य वेदप्रिय शास्त्री

**सम्पादक**

अशोक आर्य

**प्रबन्ध सम्पादक**

भवानी दास आर्य

**प्रबन्ध सहयोग**

नवनीत आर्य ( मो.9314535379 )

**व्यवस्थापक**

सुरेश पाटोदी ( मो.9829063110 )


| सहयोग ◆ | भारत | विदेश |
|---|---|---|
| संरक्षक | - 11000 रु. | $ 1000 |
| आजीवन | -1000 रु. | $ 250 |
| पंचवर्षीय | - 400 रु. | $ 100 |
| वार्षिक | - 100 रु. | $ 25 |
| एक प्रति | - 10 रु. | $ 5 |

भुगतान राशि धनादेश/चैक/ड्राफ्ट श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास के पक्ष में बना न्यास के पते पर भेजें। अथवा यूनियन बैंक ऑफ इण्डिया मेन ब्रांच टाऊन हॉल, उदयपुर खाता संख्या : 310102010041518 IFSC CODE- UBIN 0531014 MICR CODE- 313026001 में जमा करा अवश्य सूचित करें।

सृष्टि संवत् १९६०८५३११८
फाल्गुन कृष्ण चतुर्थी
विक्रम संवत् २०७४
दयानन्दाब्द १९३


सत्यार्थ-सौरभ में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार सम्बन्धित लेखक के हैं। सम्पादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है। किसी भी विवाद के प्रतिवाद हेतु न्यायक्षेत्र उदयपुर ही होगा। आपत्ति की अवधि प्रकाशन तिथि से एक माह के भीतर ही मानी जायेगी।

## आओ करें जतन भगवान की सुरक्षा के

**February - 2018**


विज्ञापन शुल्क (प्रति अंक)

कवर 2 व 3 (भीतरी आवरण) रंगीन 3500 रु.

अन्दर पृष्ठ (श्वेत-श्याम)

| | |
|---|---|
| पूरा पृष्ठ (श्वेत-श्याम) | 2000 रु. |
| आधा पृष्ठ (श्वेत-श्याम) | 1000 रु. |
| चौथाई पृष्ठ (श्वेत-श्याम) | 750 रु. |



समाचार २६
हलचल २७

| | |
|---|---|
| ०४ | वेद सुधा |
| ०८ | सत्यार्थप्रकाश पहेली- ०२/१८ |
| ०९ | संस्कृति विमर्श |
| १२ | उदारता-निर्भयता-संयम |
| १६ | सुनो बात ऋषि की |
| १७ | विनम्रता एक श्रेष्ठ धन |
| २१ | जीने का बहाना ढूंढो |
| २२ | महर्षि के प्रति |
| २३ | महान् भारतीय संस्कृति |
| २८ | शिवालिक गुरुकुल |
| २९ | कथा सरित- विनम्रता |
| ३० | सत्यार्थ पीयूष- ईश्वर सिद्धि |



स्वामी श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास नवलखा महल, गुलाब बाग, उदयपुर

वर्ष - ६ अंक - ०९

मुद्रण द्वारा - चौधरी ऑफसेट, (प्रा.लि.) ११-१२, गुरु रामदास कॉलोनी, उदयपुर

**प्रकाशक**
श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास
नवलखा महल, गुलाब बाग, उदयपुर (राजस्थान) 313001
(0294) 2417694, 09314535379, 09829063110
www.satyarthprakashnyas.org, E-mail : satyarthsandesh@gmail.com

स्वत्वाधिकारी, श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास, उदयपुर की ओर से प्रकाशक, मुद्रक अशोक कुमार आर्य द्वारा चौधरी ऑफसेट प्रा. लि., 11/12 गुरुरामदास कॉलोनी, उदयपुर से मुद्रित तथा कार्यालय श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास नवलखा महल गुलाबबाग, महर्षि दयानन्द मार्ग, उदयपुर-313001 से प्रकाशित, सम्पादक-अशोक कुमार आर्य

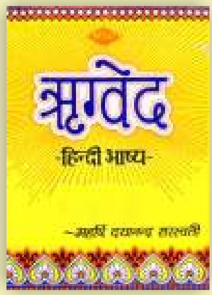


ओ३म्

# वेद सुधा

## अमरता का केन्द्र

**माता रुद्रानां दुहिता वसूनां स्वसादित्यानाममृतस्य नाभिः।**
**प्र नु वोचं चिकितुषे जनाय मा गामनागामदितिं वधिष्ट।।** ऋ.- ८/१०१/१५

ऋषिः- जमदग्निर्भार्गवः।। देवता- गौः।। छन्दः- त्रिष्टुप्।।

विनय- हे मनुष्य! तू गौ को कभी मत मार। इस निरपराध बेचारी गौ को कभी मत मार। तू चेतनावाला है, तुझे परमात्मा ने कुछ समझ, अक्ल, बुद्धि दी है। इसलिए तुझे कहता हूँ- तू गो-घात कभी मत करना! तू अपनी समझ का तनिक-सा उपयोग करेगा तो तुझे पता लग जाएगा कि यह गौ यद्यपि बड़ी भोली, बेचारी, बिलकुल निर्दोष है, इसलिए इसे कोई भी मार सकता है, मारने से यह मर जायेगी, कोई प्रतिरोध न करेगी, परन्तु साथ ही यह इतनी महत्वशालिनी है, सब देवों की सम्बन्धिनी और अमरपन का एक केन्द्र है कि इसका मारना अपना नाश करना है, इसका घात करना आत्मघात है। यह गौ कहीं और नहीं, हमारे ही अन्दर है। यह 'अदिति' आत्म-शक्ति है, वाणी है, अन्तरात्मा की वाणी है, अन्दर की आवाज है। तुम इसे दबाओगे तो यह चुपचाप दब तो जाएगी, परन्तु इससे तुम्हारा आत्मा नष्ट हो जाएगा। यह 'अदिति' वाणी (यह आदित्यों की बहिन) वसुओं- आत्मा की वासक अग्नियों- से प्रकट होती है (इनकी पुत्री है) और मनुष्य के सब रुद्रों- प्राणों- की और सब चेष्टाओं की माता है। यह ऐसी अमृत वस्तु है कि इसे मारने का यत्न करने वाला स्वयं मर जाता है, और इसकी रक्षा करनेवाला सुरक्षित रहता है। इसी अन्दर की 'गौ' की प्रतिनिधि आधिदैविक में भूमि है, आधिभौतिक में राष्ट्रदेवी है और पशुओं में गौ माता है। हे चेतनावाले मनुष्य! तू समझ कि इन गौओं का भी घात कितना भयंकर परिणाम लाने वाला है। भूमि, राष्ट्र और गौओं की रक्षा करने में ही मनुष्यों की, मनुष्य जाति की रक्षा है। देखना, इस भूमि-गौ की, इस राष्ट्र-गौ की तथा इस गौ-पशु की तनिक भी हिंसा करने वाला कर्म तुझसे न हो। जब कभी इन सर्वथा अप्रतिरोधिनी गौओं की हिंसा करने का प्रलोभन आये तो याद कर लेना कि ये सब अमृत की नाभियाँ हैं और अपने अपने क्षेत्र के आदित्यों, वसुओं और रुद्रों से सम्बन्धित दिव्य शक्तियाँ हैं। इनको मारकर तू कभी फूल-फल नहीं सकता, परन्तु अन्त में सब बाह्य गौओं की गौ तो अन्तरात्मा की वाणी है। इस गौ को तो कभी मत छेड़ना, इसे सदा पालना, पोसना और इसकी आज्ञा को सदा मानना। अपना सर्वस्व स्वाहा करके भी इस गौ की रक्षा करना। इसे तनिक भी नहीं दबाना। यदि अमृतनाभि 'अदिति' गौ का रक्षण, पोषण और वृद्धि होती गई तो तू भी एक दिन अमृत हो जायेगा, देवों का राज्य पा जाएगा। देखना, इस सर्वथा अप्रतिरोधिनी परम शान्त गौ का तेरे यहाँ तनिक भी तिरस्कार न होने पाये, इसे तनिक भी क्षति न पहुँचने पाये।

शब्दार्थ- मैं, चिकितुषे जनाय= प्रत्येक चेतनावाले मनुष्य को, नु प्रवोचम्= कहे देता हूँ कि, अनागाम्= निरपराध, अदितिम्= अहन्तव्यया गाम्= गौ को, मा वधिष्ट= कभी मत मार, क्योंकि यह रुद्राणां माता= रुद्रदेवों की माता है, वसूनां दुहिता= वसु देवों की कन्या है और, आदित्यानां स्वसा= आदित्यदेवों की बहिन है तथा, अमृतस्य नाभिः= अमरपन का केन्द्र है।

लेखक- आचार्य अभयदेव विद्यालंकार
सभार- वैदिक विनय

बोध रात्रि के अवसर पर

# आओ करें जतन भगवान की सुरक्षा के

सन् १८३७ ई. की महाशिवरात्रि का अनुष्ठान मोरवी राज्य के टंकारा ग्राम में चल रहा था। ग्राम के जमींदार कर्षण जी अत्यन्त निष्ठावान शिवभक्त थे। वे तो अनुष्ठान में प्रमुखता से भाग ले ही रहे थे परन्तु आज वे विशेष रूप से प्रसन्न थे क्योंकि उनका लाडला १४ वर्षीय मूलशंकर पहली बार शिवरात्रि का व्रत रख शिवमंदिर में शिवदर्शन की चाह लिए रात्रि जागरण हेतु तत्पर था। अनुष्ठान पूरे जोरों पर था और उत्कंठित थे मूलशंकर कि उन्हें शिवदर्शन यथाशीघ्र हो जायं। जैसे-जैसे रात्रि व्यतीत हो रही थी भक्तगण निद्रा देवी के आगोश में शरण ले रहे थे। यहाँ तक कि मूलजी के पिता तथा पुजारी भी सो गए। नहीं सोया तो केवल मूलशंकर। निद्रा से बोझिल आँखों पर पानी के छींटे मारकर जागता रहा, क्योंकि शिवदर्शन की तीव्र चाह जो थी मन में। तभी एक ऐसी घटना घटी जो सामान्य जन प्रायः देखते रहते हैं और ध्यान तक नहीं देते। परन्तु जब इसी सामान्य घटना को मूल जी ने देखा तो एक इतिहास का सृजन हो गया। परमपिता परमात्मा ने 'विवेक' नामक वरदान केवल अपने अमृत पुत्र मानव को दिया है वो इसलिए कि उचित और अनुचित में विभेद कर सके क्योंकि मानव में अन्य योनियों की अपेक्षा यही विशेषता है। मूलशंकर के इसी विवेक ने उस 'शिवरात्रि' को 'बोधरात्रि' बना दिया जिसने भारत में एक नए तर्काधारित युग का सूत्रपात किया। घटना थी चूहों का शिवलिंग पर चढ़ना और भोग प्रसाद का निश्शंक सेवन करना। मूषकों की इस लीला को देखकर मूलशंकर को 'शंकर' के वे सारे पराक्रम स्मरण हो आये जो पिताजी ने बार-बार सुनाये थे। यह प्रश्न बार-बार उनके जेहन में कौंधने लगा कि महापराक्रमी शिव इन निरीह चूहों का संहार आखिर क्यों नहीं कर रहे हैं? वस्तुतः जड़-पूजा और उसके महात्म्य को चुनौती देता यह शाश्वत प्रश्न है जो उस समय मूलशंकर के दिमाग में कौंधा। इस प्रश्न के हर विचारशील मन में बार-बार उठने का एक प्रमुख कारण यह है कि इन सभी स्थलों को नाना प्रकार की असंभव, सृष्टिक्रम से विरुद्ध घटनाओं व चमत्कारों का जनक बताया जाता रहा है। कथानकों के अनुसार जब किसी विशेष समय पर ऐसे ही स्थलों पर भगवान ने भक्तों की प्रार्थना पर प्रकट होकर चमत्कार व अविश्वसनीय पराक्रमों का प्रदर्शन किया तो फिर आज क्यों नहीं? मूल जी की श्रद्धा और चाहत में कोई कमी तो नहीं थी। मूल जी इन्तजार करते रहे पर जो नहीं होना था अर्थात् शिवजी का प्रकटीकरण, नहीं ही हुआ। विचारशील मूल के मन को इस 'न होने' ने मथ दिया। पराक्रमी शिव इन उत्पात मचाते चूहों को क्यों नहीं रोक रहे, क्यों नहीं दण्डित कर रहे? उत्तर के लिए पिता को जगाया। न पिता न पुजारी, कोई भी समाधान नहीं कर सका। पिता यही कह सके कि यह तो शिवजी के प्रतीक हैं सच्चे शिव तो कैलाश पर रहते हैं। बालक मूल ने निश्चय किया कि वे सच्चे शिव को प्राप्त करेंगे और इसी निश्चय के साथ वे रात्रि में ही घर चले गए। असत्य के साथ संभवतः बालक मूल एक क्षण नहीं बिता सके थे। कालान्तर में सत्य की खोज में मूल सदैव के लिए घर छोड़कर निकल पड़े। इस एक रात्रि को हुए बोध के कारण भारतवर्ष में एक ऐसे महापुरुष का आविर्भाव हुआ जिसने समस्त सामजिक व धार्मिक रुढ़ियों व कुरीतियों को समूलतः नष्ट करने का मार्ग प्रशस्त किया और भारत को उसके प्राचीन वैभव की ओर ले जाने का अभिनव प्रयास किया। बोधरात्रि का प्रश्न आज भी अनुत्तरित है क्योंकि शाश्वत सत्य यह है कि जड़ पदार्थ कभी चैतन्य नहीं हो सकता।

आस्था के नाम पर 'विवेक' को तिलाञ्जलि देना भारत को कभी रास नहीं आया, इतिहास इस बात का गवाह है। मोहम्मद गजनी ने केवल ५००० सैनिक लेकर गुजरात पर चढ़ाई की और इतिहासकार बताते हैं कि उस वक्त २५००० भक्त तो

सोमनाथ के मंदिर में ही मौजूद थे, जिन्हें वही आशा थी जो कि मूल जी को उस रात थी कि शिव अभी-अभी प्रकट होंगे और इन दुष्ट मूषकों को दण्ड देंगे। सोमनाथ में उपस्थित भक्तों को आशा थी कि भगवान अभी प्रकट होंगे और इन म्लेच्छों का सफाया कर देंगे पर चमत्कार न मूल जी के सामने हुआ न इन भक्तों के समक्ष। नतीजा, न केवल सोमनाथ विजित हुआ, न केवल भक्तों का कत्ले आम हुआ, खुद शिवलिङ्ग को कई हिस्सों में नापाक इरादों वालों ने तोड़कर नष्ट कर दिया। मूल जी जो आगे चलकर महर्षि दयानन्द सरस्वती के नाम से विख्यात हुए, ने अपने कालजयी ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में अत्यन्त पीड़ा के साथ इस दुर्घटना पर टिप्पणी की- 'जब म्लेच्छों की फौज ने आकर घेर लिया तब दुर्दशा से भागे, कितने ही पोप, पुजारी और उनके चेले पकड़े गये। पुजारियों ने यह भी हाथ जोड़ कहा कि तीन क्रोड़ रुपया ले लो, मन्दिर और मूर्त्ति मत तोड़ो। मुसलमानों ने कहा कि हम 'बुत्परस्त' नहीं, किन्तु 'बुत्शिकन्' अर्थात् मूर्त्तिपूजक नहीं, किन्तु मूर्त्तिभंजक हैं। जाके झट मन्दिर तोड़ दिया। जब ऊपर की छत टूटी, तब चुम्बक पाषाण पृथक् होने से मूर्त्ति गिर पड़ी। जब मूर्त्ति तोड़ी, तब सुनते हैं कि अठारह क्रोड़ के रत्न निकले। जब पुजारी और पोपों पर कोड़ा पड़े, तब रोने लगे। कहा कि कोष बतलाओ। मार के मारे झट बतला दिया। तब सब कोष लूट, मार-कूट कर पोप और उनके चेलों को 'गुलाम' बिगारी बना, पिसना पिसवाया, घास खुदवाया, मलमूत्रादि उठवाया, और चना खाने को दिये। हाय! क्यों पत्थर की पूजा कर सत्यानाश को प्राप्त हुए? क्यों परमेश्वर की भक्ति न की? जो म्लेच्छों के दाँत तोड़ डालते! और अपना विजय करते। देखो! जितनी मूर्त्तियाँ हैं, उतनी शूरवीरों की पूजा करते तो भी कितनी रक्षा होती। पुजारियों ने इन पाषाणों की इतनी भक्ति की, परन्तु एक भी मूर्त्ति उनके शिर पर उड़के न लगी। जो किसी एक शूरवीर पुरुष की, मूर्त्ति के सदृश सेवा करते, तो वह अपने सेवकों को यथाशक्ति बचाता, और उन शत्रुओं को मारता।'

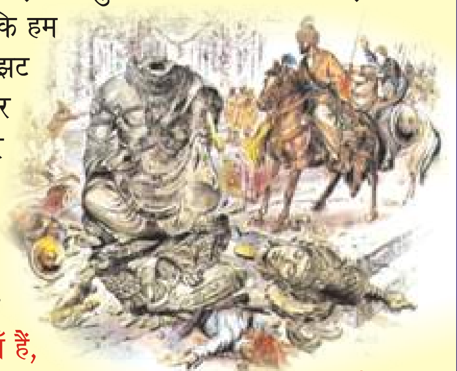

ऋषि दयानन्द का यह किसी पर कोई तंज नहीं था बल्कि राष्ट्र के पराभव के कारणों का विश्लेषण करने के क्रम में और उसके मूल में अज्ञान और अंधविश्वास की पराकाष्ठा के दर्शन कर उत्पन्न हुयी वेदना की अभिव्यक्ति थी। वस्तुतः जड़ पूजा के साथ अवतारवाद और चमत्कारवाद अनिवार्यतः जुड़े हुए हैं जो अंधविश्वास को जन्म देते हैं। यही कारण है कि आज विज्ञान ने चाहे जितनी प्रगति कर ली हो अंधविश्वास इसलिए सुरसा की भाँति पैर पसार रहा है कि उच्च शिक्षित व्यक्ति भी इसके जाल से बच नहीं सका है। वस्तुतः वह बुद्ध और दयानन्द की चिन्तन पद्धति का अनुसरण करना ही नहीं चाहता अन्यथा तथाकथित रूप से परम पराक्रमी आराध्य देव की उपस्थिति में आये दिन हो रहीं चोरी की घटनाएँ तथा अन्य अपराध उसे कुछ सोचने को विवश करते। जिन चमत्कारों का दावा किया जाता है वे या तो असत्य ही होते हैं या फिर उनके पीछे कोई 'ट्रिक' होती है। महर्षि दयानन्द को अपने देश-भ्रमण में ऐसे ही अधिकांश स्थलों पर जाने अथवा ऐसे चमत्कारों के बारे में सुनने का अवसर मिला और उन्होंने उस चमत्कार के पीछे की संभावित 'ट्रिक्स' का वर्णन अपने कालजयी ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में किया। यथा-

'..... क्योंकि वह ज्वालामुखी पहाड़ से आगी निकलती है, उसमें पुजारी लोगों की विचित्र लीला है। जैसे बघार के घी के चमचे में ज्वाला आ जाती, अलग करने से वा फूंक मारने से बुझ जाती, और थोड़ा-सा घी को खा जाती, शेष छोड़ जाती है, उसी के समान वहाँ भी है। जैसे चूल्हे की ज्वाला में जो डाला जाय, सब भस्म हो जाता, जंगल वा घर में लग जाने से सबको खा जाती है, इससे वहाँ क्या विशेष है?'

'..... जिसने बारह वर्ष पर्यन्त जगन्नाथ की पूजा की थी, वह विरक्त होकर मथुरा में आया था, मुझसे मिला था। मैंने इन बातों का उत्तर पूछा था। उन्होंने ये सब बातें झूठ बताईं, किन्तु विचार से निश्चय यह है जब कलेवर बदलने का समय

आता है, तब नौका में चन्दन की लकड़ी ले समुद्र में डालते हैं, वह समुद्र की लहरियों से किनारे लग जाती है। उसको ले सुतार लोग मूर्त्तियाँ बनाते हैं। जब रसोई बनती है, तब कपाट बन्द करके रसोइयों के विना अन्य किसी को न जाने, न देखने देते हैं। भूमि पर चारों ओर छः और बीच में एक चक्राकार चूल्हे बनाते हैं। उन हण्डों के नीचे घी, मट्टी और राख लगा, छः चूल्हों पर चावल पका, उनके तले माँजकर, उस बीच के हण्डे में उसी समय चावल डाल, छः चूल्हों के मुख लोहे के तवों से बाँध कर, दर्शन करने वालों को जो कि धनाढ्य हों, बुला के दिखलाते हैं। ऊपर-ऊपर के हण्डों से चावल निकाल पके हुए चावलों को दिखला, नीचे के कच्चे चावल निकाल दिखा के उनसे कहते हैं कि कुछ हण्डों के लिये रख दो। .......'

प्रत्येक तर्कशील मनुष्य का यही निवेदन होगा कि स्थितियों के प्रत्यक्ष दर्शन और सतर्क विश्लेषण से और भी रहस्य उद्घाटित हो सकते हैं।

अगर कोई इन चमत्कारों को सत्य मानता हो तो उसे इस प्रश्न का जबाब देना ही चाहिए कि जब वास्तविक परीक्षा का समय आता है, तो उस शक्ति का उपयोग क्यों नहीं किया जाता? कुछ वर्ष पूर्व केदारनाथ की साक्षी में जो प्राकृतिक विनाशलीला और उसमें उनके ही भक्तों की जो दशा हुयी, वहाँ उन्हें 'सेवियर' बनकर अपना चमत्कार दिखाना चाहिए था। आज तो यह स्थिति हो गयी है कि 'आराध्यों' को अपना अस्तित्व बचाना ही कठिन हो रहा है। हमने देखा गत वर्षों में अमरनाथ में शिवलिंग 'ग्लोवल वार्मिंग' तथा भक्तों की उपस्थिति से उत्पन्न ऊष्मा के कारण छोटा बन रहा था। इसको रोकने के लिए कृत्रिम शीतलन की व्यवस्था करनी पड़ी थी। क्या यह स्थिति बुद्धिजीवियों को चिन्तन का कुछ बिन्दु नहीं देती। अभी फिर ऐसा ही हुआ है। धार्मिक स्थलों पर यह अत्यन्त स्वाभाविक है कि भक्तों के लगाए जयकारे तथा घंटियों की टनटनाहट वातावरण में गूँजती रहती है परन्तु पाया गया कि यह ध्वनिप्रदूषण शिवलिङ्ग पर विपरीत असर डाल रहा है अतः पवित्र शिवलिङ्ग की रक्षा के लिए एन जी टी ने अमरनाथ गुफा में भक्तों के जयकारे लगाने तथा घंटी बजाने पर प्रतिबन्ध लगाया है।

बारह पवित्र ज्योतिर्लिङ्गों के बारे में सभी जानते हैं। इनके दर्शनों तथा पूजा-पाठ से होने वाले चमत्कारों के बारे में भी प्रायः लोग जानते हैं। उज्जैन के महाकालेश्वर की बात करें तो शिवपुराण में वर्णित उनके पराक्रम की एक कथा संक्षेप में यहाँ लिखते हैं-

शिव पुराण की 'कोटि-रुद्र संहिता' के सोलहवें अध्याय में तृतीय ज्योतिर्लिङ्ग भगवान महाकाल के सम्बन्ध में सूतजी द्वारा जिस कथा को वर्णित किया गया है, उसके अनुसार 'अवन्ति नगरी में एक वेद-कर्मरत ब्राह्मण रहा करते थे। वे अपने घर में अग्नि की स्थापना कर प्रतिदिन अग्निहोत्र करते थे और वैदिक कर्मों के अनुष्ठान में लगे रहते थे। भगवान शङ्कर के परम भक्त वह ब्राह्मण प्रतिदिन पार्थिव लिङ्ग का निर्माण कर शास्त्र विधि से उसकी पूजा करते थे। उनका नाम 'वेदप्रिय' था। उन दिनों रत्नमाल पर्वत पर 'दूषण' नाम वाले धर्म विरोधी एक असुर ने वेद-धर्म तथा धर्मात्माओं पर आक्रमण कर दिया। उस असुर को ब्रह्मा से अजेयता का वर मिला था। सबको सताने के बाद अन्त में उस असुर ने भारी सेना लेकर अवन्ति (उज्जैन) के उन पवित्र और कर्मनिष्ठ ब्राह्मणों पर भी चढ़ाई कर दी।

एक दिन सेना सहित दूषण शिव-पूजा में ध्यानमग्न वेदप्रिय और उनके पुत्रों के पास पहुँचा और उनको मार डालने का निश्चय किया। उसने ज्योंही उन शिव भक्तों के प्राण लेने हेतु शस्त्र उठाया, त्योंही उनके द्वारा पूजित उस पार्थिव लिङ्ग की जगह गम्भीर आवाज के साथ एक गड्ढा प्रकट हो गया और तत्काल उस गड्ढे से विकट और भयंकर रूपधारी भगवान शिव प्रकट हो गये।

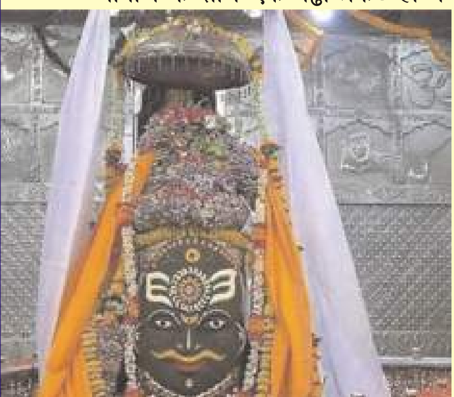

दुष्टों का विनाश करने वाले तथा सज्जन पुरुषों के कल्याणकर्त्ता वे भगवान शिव ही महाकाल के रूप में इस पृथ्वी पर विख्यात हुए। उन्होंने अपने हुँकार मात्र से ही उन दैत्यों को भस्म कर डाला। इस प्रकार परमात्मा शिव ने दूषण नामक दैत्य का वध कर दिया। इस पर सभी भक्तों ने प्रार्थना की कि हे भगवान शिव! आप आम जनता के कल्याण तथा उनकी रक्षा करने के लिए यहीं हमेशा के लिए विराजिए। भगवान शंकर अपने भक्तों की सुरक्षा के लिए उस गड्ढे में स्थित हो गये। ऐसे भगवान शिव इस पृथ्वी पर महाकालेश्वर के नाम से प्रसिद्ध हुए।' कहते हैं कि यह दक्षिणमुखी एकमात्र ज्योतिर्लिङ्ग है। इस कथा में स्पष्ट है कि भक्तों की रक्षा हेतु स्वयं भगवान शिव प्रकट हुए। {क्या आपको नहीं लगता कि सोमनाथ के ज्योतिर्लिङ्ग को तोड़ने से पूर्व भी इसी

प्रकार शिवजी का प्रकटीकरण हो क्रूर आक्रान्ता गजनी का अत्यन्त बुरा हश्र होना चाहिए था} ऐसे ही दर्शन शिव का परम भक्त मूलशंकर चाहता था पर उसका इन्तजार इन्तजार ही रहा।

अब इसी महाकालेश्वर मंदिर में स्थित शिवलिङ्ग के क्षरण को रोकने की अपार चिन्ता मंदिर प्रशासन व भक्तों को ही नहीं एन जी टी तथा माननीय उच्चतम न्यायालय को हो रही है। अभी ताजा निर्देशों के अनुसार भक्तों द्वारा की जाने वाली पूजाविधि पर अनेक प्रतिबन्ध लगाए गए हैं। हिंदुस्तान डॉट कॉम के अनुसार सर्वोच्च न्यायालय के निर्देशानुसार ज्योतिर्लिङ्ग पर आधा लीटर (केवल आर.ओ.वाटर) से अधिक जल चढ़ाया जाना प्रतिबन्धित किये जाने के बाद लोग शिवलिङ्ग को धातु के पात्र से स्पर्श किये बिना जल चढ़ा सकेंगे और गर्भगृह में निर्धारित किये गए जलपात्र ही अन्दर ले जा सकेंगे। मंदिर में बड़ी बाल्टी और घड़े ले जाना प्रतिबन्धित रहेगा और तड़के होने वाली भस्म आरती में भगवान को भस्मी चढ़ाते समय लिङ्ग को पूर्ण रूप से शुद्ध सूती कपड़े से ढका जाएगा (भस्म आरती केवल इसी ज्योतिर्लिङ्ग में होती है) तथा पूजन करते समय ज्योतिर्लिङ्ग को हाथ से रगड़ना या घिसा जाना पूर्ण रूप से प्रतिबन्धित रहेगा। पञ्चामृत आदि पूजन सामग्री में खांडसारी का उपयोग किया जाएगा। महाकाल मन्दिर में ज्योतिर्लिङ्ग पर पुष्प एवं बिल्वपत्र शीर्ष भाग पर ही चढ़ाये जायेंगे। गर्भगृह के क्षेत्र को स्वच्छ एवं सूखा रखा जाएगा।

आज दयानन्द बोध रात्रि के अवसर पर विद्वद्जन अगर विवेक की साक्षात् मूर्ति दयानन्द की चिन्तनसरणि का अनुसरण करें तो अंधविश्वास को समूल नष्ट करने में एक बड़ा सूत्रपात पुनः हो जाएगा इसमें कोई संदेह नहीं है।

– अशोक आर्य

चलभाष– ०९३१४२३५१०१, ०८००५८०८४८५

पूरा नाम–
चलभाष–

## सत्यार्थप्रकाश पहेली- ०२/१८

सत्यार्थ सौरभ सदस्य संख्या–

रिक्त स्थान भरिये– सत्यार्थप्रकाश जैसे महान् ग्रन्थ का स्वाध्याय कीजिए।( सप्तम समुल्लास पर आधारित )– पुरस्कार प्राप्त करिये

| | | | | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| १ नि | १ | म १ | ■ | २ अ | २ | न्त २ | | २ म | २ |
| ■ | ३ | ३ री | ३ | ■ | ४ | ४ | न्त | ४ | मी ४ |
| ५ | ■ | ६ | य ६ | | री ६ | ■ | ७ द | ७ | ■ |

**संकेत ( बाएँ से दाएँ ) ऊपर से नीचे न भरें।**

१. प्रत्यक्ष ज्ञान कैसा होना चाहिए?
२. ईश्वर अपने सब काम कैसे पूर्ण कर लेता है?
३. परमात्मा कभी भी क्या धारण नही करता?
४. यदि ईश्वर को एकदेशीय मानें तो वह क्या नहीं हो सकता?
५. क्या परमेश्वर का प्रत्यक्ष होता है?
६. परमेश्वर कैसा है?
७. जिसने जैसा बुरा कार्य किया हो उसे उतना वैसा ही क्या देना चाहिए?

**सत्यार्थ प्रकाश पहेली– १२/१७ का सही उत्तर**

१. नास्तिक  २. नहीं  ३. देवता  ४. महादेव
५. ग्यारह  ६. प्रजापति  ७. प्रकाशक

**"विस्तृत नियम पृष्ठ १६ पर पढ़ें एवं ₹५१०० पुरस्कार प्राप्त करें।"**

कार्यालय में हल की हुई पहेली प्राप्त करने की अन्तिम तिथि– १५ मार्च २०१८

# संस्कृति विमर्श

संस्कृति के प्रणाधार हैं संस्कार। संस्कार वह क्रिया कलाप है जिसके द्वारा किसी वस्तु, भाषा, व्यक्ति को 'संस्कृत' किया जाता है। संस्कारों के इसी सार समुच्चय को संस्कृति कहते हैं। जिस प्रकार किसी अज्ञात पदार्थ के आविष्कार से उसे संसार के सामने प्रकाश में लाया जाता है, जिस प्रकार किसी अशुद्ध वस्तु का परिष्कार करके उसे परिष्कृत किया जाता है; उसी प्रकार संस्कृति-पर्यावरण, चेतना, पवित्रता व आत्मोत्कर्ष को प्रोत्साहित करती है। संस्कृति हमारे सामाजिक व्यवहार, हमारी भाषा व साहित्य को परिमार्जित करती है। यही नहीं संस्कृति हमारी सूक्ष्म वृत्तियों को विकसित करती है, पाशविकता को मानवीयता की ओर और मानवीयता को देवत्व की ओर अग्रसर करती है। संस्कृति सदैव आदर्श दिशा की ओर इंगित करती है इसमें शुभसकारात्मक ध्वनि ही गुंजरित होती है; अशुभ नकारात्मक ध्वनि को कोई स्थान नहीं है। संस्कृति का शब्द विन्यास संस्कृति-सं+कृति= सम्यक् कृति की फलश्रुति प्रदान करता है। आविष्कार, परिष्कार एवं संस्कार के सुगम त्रैत को उदाहरण से स्पष्ट करते हैं। कोई जौहरी बहुमूल्य मणिरत्नों की खोज में भूमि की खुदाई करता है। दीर्घकाल की खुदाई के बाद भूमि की गहराई में छुपे हुए कुछ रत्नप्रस्तर मिलते हैं, यह हुआ उनका आविष्कार। वह इन प्रस्तरकणों की कटाई, छिलाई एवं घिसाई करता है तो उनके ऊपर के मलनिक्षेप की छंटाई हो जाती है। इस परिष्कार क्रिया से परिष्कृत होकर वे प्रस्तर कण श्वेतशुभ्र प्रकाशमान हीरों के रूप में चमकने दमकने लगते हैं। इनका मूल्य लाखों गुणा अधिक हो जाता है।

सामान्यतया आविष्कार एवं परिष्कार की क्रियायें प्रकृति के जड़ पदार्थों तक ही सीमित रहती है। वैज्ञानिक क्षेत्र में भी इनका प्रभाव जगत् को चमत्कृत करता रहता है। जब हम चेतन प्राणिजगत् पर दृष्टिपात करते हैं तो वहाँ पर आविष्कार, परिष्कार से कहीं अधिक संस्कार का प्रभावक्षेत्र दृष्टिगत् होता है। संसार के असंख्य जीव जन्तुओं की योनियों को तीन श्रेणियों में परिगणित किया जा सकता है। एक वे अधोमुखी हैं जिनके सिर भूमि में गड़े रहते हैं दूसरे वे सममुखी हैं जिनके सिर भूमि के समानान्तर होते हैं तीसरे वे ऊर्ध्वमुखी हैं जिनके सिर आकाश की ओर उठे रहते हैं। प्रथम में समस्त वृक्ष-वनस्पति, द्वितीय में समस्त कीट-पतंग-पशु-पक्षी और तृतीय में समस्त मानव प्राणि आते हैं। प्रथम व द्वितीय कोटि के प्राणि अपने जन्मजात स्वाभाविक ज्ञान के अनुसार अपना सम्पूर्ण जीवन व्यतीत कर लेते हैं। उनके आहार, आराम, आरक्षा, प्रजनन की क्रियायें स्वाभाविक रूप से चलती रहती हैं। ऊर्ध्वमुखी मनुष्य को स्वाभाविक के साथ-साथ ईश्वर ने नैमित्तिक ज्ञान का वरदान भी दिया है; जिसकी अपेक्षा से वह रंक से राजा बन सकता है और जिसकी उपेक्षा से वही राजा से रंक हो जाता है।

इसीलिए महर्षि मनु ने कहा है- 'जन्मना जायते शूद्रः संस्कारात्

द्विज उच्यते' अर्थात् सभी मनुष्य शूद्र के रूप में जन्मते हैं किन्तु संस्कारों के द्वारा ही वे द्विज बनते हैं। शूद्र व द्विज शब्दों को किसी जाति विशेष से जोड़ना महर्षि मनु का अभिप्राय नहीं है। शूद्र वही है जो जिस शरीर के साथ जन्म लेता है, उसी के श्रम स्वेद बिन्दुओं से उद्रवित होकर दूसरों की सहायता करता है। स्वल्प भुगतान पर जीवन यापन कर

लेता है। द्विज वह है जो एक बार माता पिता से जन्म लेता है और दूसरी बार संस्कारों के गर्भ से जन्म लेकर संस्कृति के प्रांगण में फलता फूलता व बीज बिखेरता है। **'यतोभ्युदय निःश्रेयस सिद्धिः स धर्मः'** (वै.दर्शन) अर्थात् जिससे लौकिक सुख व पारलौकिक आनन्द की सिद्धि होती है वह धर्म है। धर्म बेतार का वह तार है जिसमें संस्कृतिरूपी विद्युत प्रवाहित रहती है। धर्म शरीर आवरण के रूप में सृष्टि को धारण करता है तथा संस्कृति आत्मा स्वरूप उसमें संचरण करती है। जैसे साधारण सोने को अग्नि में तपाकर कुन्दन बनाया जाता है वैसे ही शिशुओं को संस्कार की भट्टी के व्रत ताप से उनके दुर्गुणों को दूर कर तथा सद्गुणों को पूर कर संस्कृति का शृंगार बना दिया जाता है।

बात सोलह या न्यूनाधिक संस्कारों की ही नहीं, इनको करके सम्प्रदाय के लोग अपनी सन्तान को श्रेष्ठ बनाने का उपक्रम

करते हैं। वास्तव में यह निरन्तर चलते रहने वाली प्रक्रिया है। मनुष्य ज्ञानेन्द्रियों द्वारा हर क्षण अपने मन मस्तिष्क में सूचनाओं का संभरण करता है। वह जैसा देखता, सुनता, सूंघता, खाता, स्पर्श करता है वैसा वह सोचने लगता है। जैसा वह सोचता है वैसे ही उसके विचार बनते हैं जैसे उसके विचार होते हैं, वैसे ही उसके संस्कार बनते हैं, जैसे उसके संस्कार होते हैं वैसा ही उसका व्यवहार होता है, जैसा उसका व्यवहार होता है वैसा ही उसका चरित्र बनता है। मानवीय चरित्र में ही उसकी संस्कृति की झलक दिखायी देती है। **मनुर्भव जनया दैव्यंजनम्** (ऋ. १०.५३.६) के अनुसार मननशील मनुष्य दिव्य मनुष्यों को जन्म देते व निर्माण करते हुए संस्कृत करते चले जाते हैं तो यही देश क्षेत्र विशेष की सामूहिक संस्कृति कहलाने लगती है।

मानवरूपी संचरणशील मुद्रा के दो पार्श्व हैं एक ओर संस्कृति, दूसरी ओर चरित्र है। मुद्रा का अग्र या पृष्ठ कोई भी भाग असामान्य होने पर वह प्रचलन से बाहर हो जाती है। दोनों पार्श्व सम्यक् न होने पर मानव की भी यही स्थिति हो जाती है वह समाज के लिए अवांछनीय हो जाता है।

स्वामी विवेकानन्द भारत की महान् संस्कृति का सन्देश लेकर अमेरिका गए थे। उनकी अलमस्त वेशभूषा एवं व्यवहार को देखकर वहाँ के निवासी उनको कोई विचित्र प्राणी समझकर हास्य विनोद में मग्न हो जाते थे। ऐसे ही एक अवसर पर उन्होंने नागरिकों को सदा-सदा के लिए सचेत कर दिया था। "In your country it is tailor who makes a men cultured and civilised, but I belong to that country where a man's character and moral spiritual values make him cultured and civilised." अर्थात् आपके देश में दर्जी परिधान पहना कर सभ्य बनाता है किन्तु भारत जहां का मैं निवासी हूं वहां मनुष्य को चरित्र नैतिकता एवं उसके आध्यात्मिक मूल्य उसे सभ्य व संस्कृत बनाते हैं।

कई बार सभ्यता एवं संस्कृति को एक समझ लिया जाता है। जैसे कोई फल ऊपर से रंगरूप एवं आकार में बहुत आकर्षित करता है किन्तु चखते ही मुँह कड़वा हो जाता है और फेंक दिया जाता है। ऐसे ही शरीर का रूपाकर्षण सभ्यता समझनी चाहिए और फल के अन्दर व्याप्त सुगन्धित मधुर पोषक रस को संस्कृतिरूपी अन्तःशक्ति समझनी चाहिए। इसके लिए जन्मकाल से ही अभिभावकों को सतर्क रहना पड़ता है। इस ध्येय से शिक्षा की अपरिहार्य आवश्यकता है। शिक्षा से साधारण तात्पर्य सीखना-सिखाना सीख देना और आवश्यक होने पर दंड देना। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने शिक्षा की जो परिभाषा दी है वह सभी मानवीय पक्षों का आच्छादन करती है 'जिससे विद्या, सभ्यता, धर्मात्मता, जितेन्द्रियतादि की बढ़ती हो और अविद्यादि दोष छंटे वह शिक्षा है। 'सत्यार्थ प्रकाश' ग्रन्थ में उन्होंने लिखा है-

**माता शत्रु पिता वैरी येन बालो न पाठितः।**
**न शोभते सभा मध्ये हंस मध्ये वको यथा।।**

शरीर से दुर्बल व्यक्ति भी अपनी विद्याजनित संस्कृति द्वारा शीर्ष पद का अधिकारी बन जाता है। प्रधानमंत्री मोदी ने विकलांग को दिव्यांग की संज्ञा देकर अपनी सहृदयता का परिचय दिया है। कभी इसके लिए राजा जनक को भी बाध्य होना पड़ा था। उनकी वृहद् सभा में एक बालक अष्टावक्र ने अभी द्वार में प्रवेश ही किया था कि सभी सभासद उनको

देखकर खिलखिलाते हुए हँसने लगे। कारण यह था कि वह बालक अपने शरीर के आठ अंगों से टेढ़ा था। जब सभा की सामूहिक हँसी थम गई तब अष्टावक्र ने अट्टाहास करते हुए अपनी हँसी गुंजायमान कर दी। बाद में राजा जनक ने नम्रतापूर्वक अष्टावक्र को सम्बोधित करते हुए उनसे पूछा- अष्टावक्र! सभा तो तुम्हारे इस वक्रातिवक्र शरीर को देखकर हँस पड़ी पर तुम क्यों हँसे? बताइये? अष्टावक्र ने उत्तर दिया- राजन्। आप विदेह कहलाते हैं और मैं यहाँ विद्वानों की सभा समझकर आया था पर यहाँ तो सभी चर्मकार दिखाई दिए जिन्होंने मेरे शरीर को देखा मेरी अन्तरात्मा के सौन्दर्य ज्ञान को नहीं आंका। राजा जनक ने बालक अष्टावक्र का क्षमापूर्वक स्वागत किया और उनसे ज्ञानोपदेश ग्रहण किया। आध्यात्मिक संस्कृति साहित्य में अष्टावक्र गीता का प्रमुख स्थान है।

साक्षर लोग सुशिक्षित होकर एक से एक उपयोगी चमत्कार करते देखे जाते हैं पर वे तब अशिक्षित ही रह जाते हैं जब वे अपने ज्ञान का दुरुपयोग अन्याय, अपमिश्रण एवं अत्याचार के लिए करते हैं। इसके विपरीत निरक्षर लोग प्रशिक्षित होकर अपनी सहज सुलभ बुद्धि से उत्तम रचनात्मक कार्य कर लेते हैं। लोकप्रिय ग्रन्थ पंचतंत्र में एक आख्यान आता है। चार भाई थे। तीन भाई पढ़े लिखे विशेषज्ञ थे, चौथा भाई अनपढ़ किन्तु बुद्धिमान था। इसलिए वे छोटे भाई से लगाव नहीं रखते थे। जब वे धनोपार्जन के लिए गाँव से किसी नगर में जाने लगे तो भी कठिनाई से साथ ले जाने को तैयार हुए। मार्ग में एक जंगल पड़ा वहाँ कुछ अस्थियाँ पड़ी देखकर ढांचा विशेषज्ञ भाई ने अस्थियों को क्रमानुसार व्यवस्थित करके पशु विशेष का अस्थिजाल खड़ा कर दिया, दूसरे रसायनज्ञ भाई ने उस पर मांस त्वचा का आवरण चढ़ा दिया। तीसरे प्राणवायु विशेषज्ञ भाई को छोटे भाई ने बहुत रोका, सावधान किया, बोला- 'इस जानवर को पहचानने के बाद भी आप जीवित करना चाहते हैं। विद्या का अभिमान आप लोगों को खा जायेगा।' छोटे भाई ने पेड़ पर चढ़कर अपने जीवन को बचा लिया जबकि प्राण प्रतिष्ठा होते ही कालान्तर में क्षुधित शेर ने तीनों विशेषज्ञ भाइयों को अपना आहार बना लिया।

संस्कृति आन्तरिक आध्यात्मिक एवं त्याग की प्रतीक है जबकि सभ्यता बाह्य भौतिक एवं भोग पर आधारित है। महा घातक ऐ.के. ४७ राइफल की खोज करने वाले माइकेल कलष्किनिकोव को तब बड़ी निराशा हुई जब आतंकवादियों द्वारा उसका दुरुपयोग होने लगा। उन्होंने कहा था कि यदि मैं किसानों के उपयोग का अच्छा यंत्र आविष्कृत करता तो मुझे अधिक सन्तुष्टि होती' (वेदवाणी नवम्बर २०११)। सम्पूर्ण कथ्य का चार बिन्दुओं में सार समाहार करके लेखनी को विश्राम देना उचित समझता हूँ। न जियो न जीने दो- विष्कृति है, जियो किन्तु जीने न दो विकृति है, जियो और जीने दो प्रकृति है, न जियो किन्तु जीने दो- संस्कृति है।


– देवनारायण भारद्वाज

प्रधान सम्पादक 'वयस्वी'

वरेण्यम अवन्तिका प्रथम, रामघाट मार्ग

अलीगढ़ ( उत्तरप्रदेश )



न्यास द्वारा प्रकाशित सत्यार्थ प्रकाश

अब ४००० रु. सैकड़ा

सत्यार्थ प्रकाश प्रचार सहयोग अब

एक हजार प्रतियों के लिए १५००० रु.


## नवलखा महल में नवनिर्मित "आर्यावर्त्त चित्रदीर्घा" एवं सत्यार्थ प्रकाश स्तम्भ के बारे में दर्शकों के विचार

बहुत अच्छी जानकारी मिली है, बहुत अच्छी जगह है। उम्मीद है आने वाली पीढ़ियों के लिए आप इन सभी जगहों को सहेजकर रखेंगे क्योंकि आने वाली पीढ़ियों को हमारे अतीत और हमारे इतिहास के बारे में पता होना चाहिए जिसकी बदौलत विश्व के मानचित्र पर भारत का नाम एक अलग तरह से चमकता है।
– निशान्त (हरियाणा)

इस स्थान का वर्णन जितना अच्छाई के प्रति किया जाय उतना कम है इस जगह को देखने से यह पता चलता कि हमारे भारत देश में भी दर्शन करने एवं घूमने वाली जगहें बहुत अच्छी-अच्छी हैं। मैं भारतीय होने पर गर्व करता हूँ। यह जगह काफी सुन्दर है।
– मोती कुमार (बिहार)

नवलखा महल में महर्षि दयानन्द सरस्वती के बारे में अच्छी जानकारी मिली एवं रामायण के बारे में भी अच्छी जानकारी मिली इस महल में आकर हमें अनेक जानकारी प्राप्त हुई जो प्राचीन इतिहास से अवगत कराती हैं।
– जीवतराम मीणा

**गरीबी** में उदारता, संकट में निर्भयता (प्रपंच में शान्त), एकान्त में संयम- श्री महाराज साधकों के लिए इस त्रिसूत्री कार्यक्रम का संकेत किया करते हैं। ये थोड़े-से शब्द इतने व्यावहारिक व अर्थगर्भित हैं कि यदि कोई इनकी साधना कर ले तो वह अपने जीवन को महान् सौभाग्य से भर सकता है। आइए! इन सटीक व सारभूत उपदेशों पर विचार करते हैं-

**गरीबी में उदारता-** 'उदारता' मानव हृदय की एक विशेष स्थिति है। हृदय का जब संकोच भाव समाप्त होकर विशालता में परिवर्तित हो जाता है, तो उस अवस्था का नाम है- 'उदारता'। हृदय इतना अधिक संकुचित हो सकता है कि उसमें किसी भी चीज को स्थान न मिले, और इतना विशाल भी हो सकता है कि सब कुछ ही उसमें समा जाए। वैदिक ऋषि भी जब 'ओ३म् महः पुनातु हृदये।''ओ३म् मित्रस्य चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम्' इत्यादि प्रार्थनायें करते हैं, तो उनका भाव अपने हृदय को विशाल बनाने का ही होता है।

समय, शक्ति, विद्या, बुद्धि, धन, ऐश्वर्य, भौतिक साधन, जमीन, जायदाद, समझ (ज्ञानशक्ति) इत्यादि व्यक्ति के पास जो कुछ भी शुभ होता है, वह उनके लिए होता है जिनको वह अपना समझता है। इस अपनेपन का जितना विस्तार होता जाता है, उसी अनुपात में हृदय की विशालता या उदारता बढ़ती जाती है। एक व्यक्ति का अपनापन अपने शरीर तक होता है, दूसरे का परिवार तक, तीसरे का गाँव तक, चौथे का अपने इलाके तक, पाँचवें का प्रान्त तक, छठे का देश तक, सातवें का विश्व तक। इनमें भी कुछ के प्रति अपनापन प्रधानरूप से होता है और शेष के प्रति गौणरूप से। जिसको प्रधानरूप से अपना मान लिया है उसके लिए तो सभी अपने-अपने स्तर पर त्याग कर रहे हैं- उसमें कुछ कहने-सुनने की बात ही नही है। पर उदारता की आवश्यकता वहाँ पड़ती है, जब कोई अपरिचित भी सहयोगापेक्षी होता है। यह उदारता ही है जो व्यक्ति का ध्यान

अपने 'स्व' से हटाकर 'पर' पर केन्द्रित कर देती है।

इस समस्त संसार को देखने से ऐसा लगता है कि तीन प्रकार के लोग हैं-एक वे हैं 'जो सारी सृष्टि को अपने सुख के लिए समझते हैं'। दूसरे 'सारी सृष्टि के सुख के लिए अपने आपको समझते हैं'। तीसरे 'परस्पर के सुख के लिए यह सृष्टि है ऐसा समझते हैं'। पहली विचारधारा के लोग सर्वथा क्रूर, हृदयहीन, संकुचित, अनुदार हो जाते हैं। वे सृष्टि का उपयोग अपने सुख के लिए करते तो हैं, पर वैसा चाहते हुए भी वे सुख ले नहीं सकते। वे मात्र अपने अहं की तृप्ति, वह भी कुछ आंशिक रूप में ही कर सकते हैं। सुख उन लोगों के हिस्से में नहीं आता, क्योंकि सृष्टि-नियम ही कुछ ऐसे हैं- व्यक्ति जो कुछ दूसरों को देता है वही उसे मात्रा में कई गुणा बढ़कर वापस मिलता है। जब व्यक्ति दूसरों के लिए अच्छा-बुरा कुछ कर रहा होता है तो मानो उस समय उन कर्मों के बीज बो रहा होता है, जो बाद में फल के रूप में व्यक्ति को मिल जाते हैं। फल हमेशा अधिक ही होता है। बीज तो एक होता है, उस पर फल सैकड़ों लगते हैं। सो दूसरों को दुःख देने वालों को दुःख तथा सुख देने वालों को सुख और उसमें भी जिस तारतम्य भेद से वह दिया जा रहा

है, उसी तारतम्य से प्राप्त होता रहता है।

दूसरे प्रकार के लोग जो पूर्ण रूप से अपने आप को सृष्टि के सुख के लिए समझते हैं, वे अवश्य ही संख्या में इतने कम होते हैं कि उनकी गिनती अंगुलियों पर की जा सकती है। पर युगों-युगों तक वे ही अपने प्रकाश से सम्पूर्ण मानवता को आलोकित करते रहते हैं। सृष्टि के सूर्य, चन्द्र, वायु इत्यादि समस्त प्राकृत पदार्थ बिना भेदभाव के जैसे अपनी सेवायें अर्पित करते हैं, उसी प्रकार वे भी निष्पक्ष होकर अपने प्रेम व करुणा को निरन्तर प्राणिमात्र के ऊपर उडेलते रहते हैं। उनके लिए न कोई अपना होता है न कोई पराया होता। न कोई शत्रु न कोई मित्र, न कोई उपकारी न कोई अपकारी, न कोई भाई न कोई सखा, न कोई बड़ा न कोई छोटा, न कोई हीन न कोई महान्, न कोई उच्च न कोई नीच- सब प्राणियों में सम रूप से अवस्थित उस आत्म-तत्त्व को ही वे देखते रहते हैं।

इसलिए वे भी सबके लिए 'सम' हो जाते हैं और देश-काल परिस्थिति के अनुसार जो उनके पास उत्तम से उत्तम ज्ञान, विद्या, धन, औषधादि होता है उसकी समान रूप से अपने 'निकटवर्ती जीव जगत्' पर वृष्टि करते रहते हैं। यहाँ यह ध्यातव्य है, जैसा कि कहा गया मनोवैज्ञानिक स्तर पर न कोई उनके निकट होता है न कोई दूर, इसलिए 'निकटवर्ती' शब्द उन लोगों की ओर संकेत मात्र है जो शरीर से उन महान् आत्माओं के समीप उनकी सेवायें लेने के लिए उपस्थित होते हैं। सचमुच ऐसे ज्ञानी पुरुषों का हृदय इतना विशाल होता है, जिससे बाहर कुछ भी शेष नहीं बचता। ये उदारता के मूर्त्त रूप ही होते हैं।

तीसरे प्रकार के लोग जो सृष्टि को परस्पर एक दूसरे के सुख के लिए मानते हैं, वे दूसरों के जीवन व स्वतंत्रता में बाधक न बनते हुए उनसे सुख लेते हैं तथा बदले में जो उनके पास है उसे देते भी रहते हैं। इस मान्यता वाले लोगों के अनेक स्तर भेद होते हैं, कुछ दूसरों से अधिक सुख लेना चाहते हैं और बदले में कम सुख देना चाहते हैं, दे पाते हैं या देते हैं। कुछ दूसरे ऐसे भी होते हैं, जो दूसरों से कम-से-कम अपेक्षा रखते हैं और अधिक-से-अधिक सहयोग करना चाहते हैं।

सर्वत्र उदारता के मूल में प्रेम व करुणा का ही हाथ रहता है। जितना-जितना व्यक्ति में यह भाव बढ़ता जाता है, उतना-उतना उसका ध्यान अपने से हटने लगता है तथा दूसरे पर टिकने लगता है। जब व्यक्ति दूसरे को अपने से अधिक महत्त्वपूर्ण समझता है, तो दूसरे के दुःख या दूसरे की आवश्यकता पर तत्काल ध्यान जाता है। और उस अवस्था में जो उसके पास है उसी से उसकी सेवा करना चाहता है। किसी के पास लाखों रुपये हैं, वह उनमें से सौ-दो-सौ रुपये किसी को दे देता है। दूसरे के पास सौ-दो-सौ ही हैं- वे ही अर्पित कर देता है। श्री महाराज कहते हैं- 'यही है गरीबी में उदारता'।

एक और उदाहरण लीजिए- एक भिखारी कटोरा लिये भीख माँग रहा है। राजा का उधर से गुजरना हुआ कि राजा ने उसके कटोरे में चार आना डाल दिये। इतने में एक कोई दूसरा भिखारी आ निकला और उसने उस भिखारी के सामने हाथ फैला दिया- भिखारी ने कटोरे सहित चार आने उसको दे दिये। यह है गरीबी में उदारता। राजा ने तो चार आने दिये, इसने चार आने भी दे दिये और कटोरा भी।

महाभारत में इसका तेजस्वी उदाहरण मिलता है- जबकि कई दिन बाद एक ब्राह्मण परिवार को भोजन मिला। अकस्मात् उसी समय एक भूखे व्यक्ति का आना हो गया। उस ब्राह्मण परिवार के चार सदस्य थे, सबने अपना-अपना हिस्सा बारी-बारी करके भूखे अतिथि को प्रसन्नता-पूर्वक खिला दिया। बोझ मानते हुए या दुःखी होते हुए नहीं, बल्कि आनन्द के साथ। वस्तुतः यह हृदय का एक महान् सद्गुण है। कोमलता (Humility) की पराकाष्ठा है। ऐसा हृदय अहित व दुरित से स्वतः ही निवृत हो जाता है, क्योंकि अहित करने के लिए हृदय का कठोर होना आवश्यक है। कोमल हृदय का तो भला करना स्वभाव ही हो जाता है।

**संकट में निर्भयता-** संकट में आत्मनिष्ठ, प्रपंच में पूर्णप्रज्ञ प्रशान्त, प्रतिकूलताओं में समाहित, संकट में समाधिस्थ, संकट में निर्भयता, ये सभी शब्द मूल रूप से एक ही अर्थ को प्रकट कर रहे हैं कि जिस प्रकार अनुकूलताओं में व्यक्ति का मन शान्त व समाहित होता है, उसी प्रकार प्रतिकूलता में भी रह सके तो समझना चाहिए कि जीवन यात्रा की दिशा ठीक है। संकट, प्रतिकूलता और प्रपंच व्यक्ति के लिए परीक्षा की घड़ी होते हैं। उस अवस्था में ही व्यक्ति की साधना का निश्चय होता है कि वह कहाँ खड़ा है? कितनी प्रगति हुई है? श्री महाराज एक बात और कहा करते हैं कि आचरण के क्षेत्र में शत-प्रतिशत अंक लेने पर ही उत्तीर्णता मानी जाती

है। सो यहाँ पर या तो व्यक्ति उत्तीर्ण होता है या अनुत्तीर्ण। बीच की और कोई सीमा रेखा नहीं है। संकट के समय यदि व्यक्ति का चित्त थोड़ा-सा भी डाँवाडोल हो जाता है तो यही समझना चाहिए कि वह असफल हो गया।

अनुकूल समय तो किसी साधक के लिए वैसा ही होता है जैसा कोई परीक्षार्थी या कोई मल्ल अपनी तैयारी कर रहा होता है। यह कहना अनावश्यक है कि तैयारी जितनी अच्छी होगी, परीक्षा देने में सुविधा उतनी अधिक होगी। एक मल्ल बिना ही व्यायामादि और स्वास्थ्य के नियमों का आचरण

किये, यदि अखाड़े में उतर पड़ता है तो विजय के लिए क्या आशा की जा सकती है? मन को लक्ष्य करके ही सजगता व शान्त ध्यान आदि साधनों के द्वारा व्यक्ति को अपनी सत्ता की गहराई में बार-बार उतरना होता है। विषम परिस्थितियों के उपस्थित होने पर मन को कैसे शान्त रखा जाता है, यह इस विद्या को अधिगत करने पर ही आशा की जा सकती है कि व्यक्ति संकट के समय भी निर्भय बना रहे।

जैसे दूध दुहने की या नदी में तैरने की एक कला होती है। जो लोग इन कलाओं में पारंगत हो जाते हैं उन्हें इन कामों को करने में कोई कठिनाई नहीं होती। बाकी लोगों के लिए इस प्रकार के सरल कार्य भी असम्भव जैसे प्रतीत होते हैं। सतत व्यायाम के अभ्यास के द्वारा जैसे व्यक्ति अपनी क्षमताओं को धीरे-धीरे बढ़ाता चला जाता है, माँसपेशियाँ सर्वथा उसके अनुकूल हो जाती हैं। उसी प्रकार मन को भी प्रशिक्षित किया जाता है। नट लोग एक पतले तार पर चलने जैसा कठिन कार्य अभ्यास बल से ही तो कर पाते हैं। आचरण के क्षेत्र में भी अभ्यास का यही महत्त्व है। श्री महाराज तो अभ्यास को इतना महत्त्व देते हैं कि उनका यहाँ तक कहना है-'यदि अभ्यास अपूर्ण है तो कोई भी ऊँची से ऊँची जानकारी किसी समस्या के समाधान में कुछ भी मदद नहीं कर सकती, और यदि अभ्यास पूर्ण है तो फिर तथ्यात्मक ज्ञान का वस्तुतः कोई अर्थ नहीं रह जाता'। सो वे कहते हैं- 'ज्ञान का अर्थ जानना नहीं, बल्कि वैसा हो जाना है'।

वे एक बात और भी कहते हैं- 'आवश्यक नहीं कि विचारों की भूल का तत्काल पता लग जाए, पर आचरण की भूल उसी समय प्रकट हो जाती है'। सो आचरण को भूल-रहित बनाने का श्री महाराज के अनुसार एक ही अनन्य साधन है- 'अभ्यास'। मन को शान्त स्थिति में बनाए रखने के लिए जो आन्तरिक प्रयत्न किया जाता है उसी का नाम है 'अभ्यास'। महाराज का कहना है कि सत्य को बुद्धि के द्वारा समझ लेना कोई कठिन काम नहीं है, उस पर निरन्तर चलना या चलते रहना, यही आवश्यक, मुख्य व असाधारण कार्य है। इस विषय में आश्रम में एक शिलालेख भी है-'अभ्यास के बिना सिद्धान्त एक विडम्बना है।' प्रायः व्यक्ति विभिन्न सिद्धान्तों को समझने में जितना व्यग्र रहता है उतना उस जाने हुए सत्य का अभ्यास करने के लिए नहीं होता।

मन को निरन्तर साधने का अभ्यास ही तो 'साधना' है, जिसके द्वारा प्रपंच में शान्त रहा जा सकता है। यही वह प्रमुख व अन्तरंग साधन है जिसके बल पर आज तक ज्ञानी-सन्त-महात्मा-विप्र-ऋषि-महर्षि-योगी-तपस्वी जनों ने महान् पद को प्राप्त करके मनुष्य जीवन की उच्चतम सम्भावनाओं को चरितार्थ करके दिखाया है।

स्वाध्याय-सत्संग, उच्च-उद्देश्य, कार्मिक-व्यस्ततायें व्यक्ति की मदद तो करती हैं, पर उस साधन की अपेक्षा ये सब बहिरंग ही हैं। इस प्रकार मन को साधने की विद्या में ही समस्याओं का अन्तिम समाधान छिपा हुआ है। महाराज ऐसे सन्तों को अपनी प्रणामांजलि भेंट करते हुए कहा करते हैं- 'हम तो उन सन्तों के दास जिन्होंने मन साध लिया।' यों तो मन को साधने के लिए साधकों ने अपने-अपने ढंग से विभिन्न आविष्कार किये हैं, पर योग-सूत्रकार पतंजलि ने दो प्रमुख साधनों का निर्देश किया है- या तो व्यक्ति नेति-नेति के द्वारा अपने-आपको पहचाने कि मैं शरीर नहीं हूँ, मैं पंचभूत नहीं हूँ, मैं पंचतन्मात्र नहीं हूँ, मैं इन्द्रियाँ नहीं हूँ, मैं मन भी नहीं हूँ और मन की वृत्तियाँ भी नहीं हूँ, मैं सद्-असद् भावनायें भी नहीं हूँ, मैं बुद्धि भी नहीं हूँ, मैं वह अंहकार भी नहीं हूँ जिसके द्वारा व्यक्ति अपने-आपको, 'मैं ऐसां हूँ, मैं वैसा हूँ' इस रूप में समझता है, इन सबका निषेध करने पर जो बचा रहता है- वह पूर्ण चिन्मय रूप ही मेरा सच्चा रूप है।

एक तो इस स्वरूप प्राप्तिरूप आश्रय के द्वारा व्यक्ति प्रकृति के सूक्ष्म व जटिल बन्धनों को तोड़ सकता है। बन्धनों के टूटते ही व्यक्ति अभय हो जाता है। जब तक व्यक्ति बन्धन में होता है, तभी तक किसी प्रकार का 'भय' उसका पीछा

करता है। भय-बाधा-कठिनाईयाँ-अशान्ति-दुःख, ये सब मन व बुद्धि के अविवेक की ही तो उपज हैं। सो मन व बुद्धि को ज्ञान से आलोकित रखने के लिए 'प्रकृति-पुरुष विवेक' एक उपाय है। या फिर दूसरा उपाय है मन को उच्चतर शक्ति के प्रति पूर्ण समर्पित रखना, भक्ति से सदा ही लबालब भरे रहना, अपनी समस्त शारीरिक-वाचिक क्रियाओं, मन के विचारों व हार्दिक भावनाओं की उस परम शक्ति के प्रति आहुति देते रहना- इस भक्तिरूप उपाय से भी मन शान्त हो जाता है। सम्पूर्ण संसार भी यदि उसके विरोध में खड़ा हो जाए, तो भी वह अपने आप को पूर्ण सुरक्षित समझता है।

कैसी भी विषम से विषम घटनाओं व परिस्थितियों का भी वह हँसते-हँसते स्वागत करता है। घोर अपमान, तिरस्कार व घृणा से सर्वथा अलिप्त रहता है। किसी के द्वारा उस पर

क्रोध की दनादन वर्षा किये जाने पर कछुए की भाँति अपने आप को अन्दर खींच लेता है। विरोधियों के द्वारा कष्ट पहुँचाये जाने पर कभी भी प्रतिहिंसा व प्रतिशोध का भाव नहीं लाता। चारों तरफ शोक व मोह का सागर उमड़ पड़ने पर भी ऐसी मुक्ति प्राप्त कर लेता है कि उस शोकसागर या मोहसागर में अपने-आपको डूबने नहीं देता। स्वामी दयानन्द ने भी अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'सत्यार्थ प्रकाश' में निज अनुभव बल से उपासक की महती उपलब्धि का इन्हीं शब्दों में वर्णन किया है कि 'कष्टों का साक्षात् पहाड़ टूट पड़ने पर भी वह शान्ति से सह सकने में समर्थ हो जाता है।' वस्तुतः केवल एतद्विषयक संकल्प मात्र कर लेने से अथवा किसी महापुरुष का प्रवचन सुन लेने से या ऊँचे-से-ऊँचे शास्त्रों का अध्ययन-मनन कर लेने मात्र से 'प्रतिकूलताओं में प्रशान्त' नहीं रहा जा सकता। इसके लिए मन का सतत जागरूक रहना परम आवश्यक है।

**एकान्त में संयम-** व्यक्ति समूह में जो आचरण करता है, उसमें मान-अपमान का भाव बीच में आ जाने के कारण बाह्य दिखावा अधिक विद्यमान रहता है। अन्दर से व्यक्ति चाहे संयमी न भी रहे, पर बाहर से संयम का प्रदर्शन करना होता है। कारण? समाज के द्वारा दण्डित होने का भय व पुरस्कार का प्रलोभन बराबर ही उसके समक्ष बना रहता है। अन्दर-अन्दर कोई भी कामना अपनी जड़ जमाए रहती है, प्रलोभन व्यक्ति को खींचता रहता है, पर सामाजिक भय के कारण व्यक्ति शरीरतः वैसा कर नहीं सकता और इसलिए बाह्य दिखावा मात्र करता रहता है अर्थात् उस अवसर पर व्यक्ति का मन तो असंयमी हो जाता है, पर शरीर को व्यक्ति जैसे-तैसे वैसा करने से रोके रखता है। महाराज कहते हैं कि यदि व्यक्ति का मन संयमी है तो ही समझना चाहिए कि व्यक्ति संयमी है।

**व्यक्ति के मन के संयम-** असंयम की परीक्षा तब होती है, जब उसे किसी प्रकार का बाह्य भय नहीं होता। सर्वथा एकान्त निर्जन स्थान में भी किसी को यौवन का सौन्दर्य किञ्चित भी आकृष्ट न कर सके फिर कहीं इसी प्रकार प्राप्त हुए सोने का आकर्षण उसे लुभा न सके तो समझना चाहिए कि अमुक व्यक्ति ने अपने मन पर संयम कर लिया है। कहने का भाव यह है कि व्यक्ति बुराई से या तो आन्तरिक धर्मनिष्ठा और ईश्वर विश्वास के द्वारा रुकता है, अथवा बाह्य सामाजिक मर्यादाओं के द्वारा अर्थात् किसी बाह्य भय के द्वारा। एकान्त में संयमी वे ही हो सकते हैं जिनका अपनी अन्तःसत्ता में पूर्ण विश्वास हो। अपनी अन्तरात्मा में जिन्होंने सत्य-असत्य को पहचान लिया हो। वस्तुतः इस स्थिति को प्राप्त हुआ व्यक्ति सर्वथा सर्वदा निर्भय हो जाता है। सरलार्थ यह है- एकान्त में संयमी होना देवत्व है। बाह्य भयवश अपने आपको किसी बुराई से बचाना सामान्य मनुष्यत्व है। किन्तु साधक का तो लक्ष्य यही है कि मनुष्यत्व से देवत्व की ओर सतत आरोहण करता रहे।

साभार- जीवन का समाधान
प्रस्तुति- आचार्य प्रद्युम्न जी


## सत्यार्थप्रकाश प्रचार सहयोग निधि

- **सत्यार्थ प्रकाश से उत्कृष्ट कोई ग्रन्थ नहीं जिसके प्रकाशन में आपकी पुण्य दान राशि का प्रयोग हो।** सत्यार्थ प्रकाश प्रचार हेतु,कम राशि में अधिक संख्या में यह महान् ग्रन्थ जन-जन के हाथों में पहुँच सके, एतदर्थ निम्न योजना निर्मित की गई है:-
- सत्यार्थप्रकाश के प्रचार हेतु कृपया निम्नानुसार सहयोग कर **लागत मूल्य से आधी कीमत में** सत्यार्थप्रकाश का दिया जाना सुनिश्चित करें। आपके द्वारा सहयोगार्थ प्रदान की गई राशि के समक्ष अंकित प्रतियों पर आपका अथवा आपके किसी प्रियजन का चित्र ग्रन्थ पर दिया जावेगा।

| राशि | प्रतियों की संख्या | राशि | प्रतियों की संख्या |
|---|---|---|---|
| १५०००० | दस हजार | ११२५०० | ७५०० |
| ७५००० | ५००० | ३७५०० | २५०० |
| १५००० | १००० | इससे स्वल्प राशि देने वाले दानवीरों के नाम ग्रन्थ में अंकित किये जायेंगे। | |

**आपका दान आयकर अधिनियम की धारा ८० जी के अंतर्गत करमुक्त होगा।** राशि न्यास के नाम ड्राफ्ट या चैक द्वारा भेजें अथवा यूनियन बैंक ऑफ इंडिया, उदयपुर खाता क्रमांक ३१०१०२०१००४१५१८ में जमा कर सूचित करें।

निवेदक

भवानीदास आर्य (मंत्री-न्यास) | भंवरलाल गर्ग (कार्यालय मंत्री) | डॉ.अमृत लाल तापड़िया (उपमंत्री-न्यास)

# सुनो बात ऋषि की

दयानन्द आनन्द दाता, ऋषि था,
सुधा-सार सबको पिलाता ऋषि था।
महत् था, मधुरतम, महा क्रान्तिकारी,
दयामय दया का था अनुपम पुजारी।
सभी भेदभावों को जग से मिटाना,
अँधेरे मतों को हटाना था ठाना।
वह सच्चा था योगी, युगों का विजेता,
मनुज मात्र का था अकेला ही नेता।
न उस सा था कोई, न आगे भी होगा,
ऋषि सा न कोई सुधारक भी होगा।
सभी को बचाया, सभी को उठाया,
कातिल भी सीने से जिसने लगाया।
महादेव देवों का सरताज वह था,
महापूत पावन पवन वेग वह था।
उसे रोक पाया न तूफान युग का,
उसे बाँध पाया न जंजाल जग का।
वह सब का गुरु था सफल मंत्रदाता,
सकल मानवों का वही एक त्राता।
उसी ने दिखायी थी जीवन की राहें,
उसी ने सुनी दीन जन की कराहें।
सुनो बात ऋषि की, उसी पर चलो सब,
सभी भेदभावों की भाषा हटा दो।
सचाई के रस्ते को मानो सभी तुम,
पापों की गठरी जला दो, मिटा दो।

लेखक- भारतेन्द्र नाथ

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते।
तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्त्यनश्नन्नन्यो अभि चाकशीति।।

- ऋ.१/१६४/२०

एक वृक्ष की शाखा पर, मिलकर बैठे हैं दो पक्षी।
वृक्ष प्रकृति है जीव है भोक्ता, परमेश्वर द्रष्टा साक्षी।
तीन अनादि तत्व हैं जग में, त्रैतवाद जग का आधार।
प्रकृति सत् है जीव है सत् चित्,
ईश्वर सच्चिदानन्द कर्तार।
जान जगत् के त्रिविध रूप को,
'विमल' हो रूप सँवारें हम।
निर्लिप्त हो जग भोग करें,
द्रष्टा को नित आभारें हम।

विमलेश बंसल आर्या


## आर्यरत्न डॉ. ओमप्रकाश (म्यॉंमार) स्मृति पुरस्कार

## ''सत्यार्थ-भूषण'' पुरस्कार

₹ 5100

### कौन बनेगा विजेता

☞ न्यास की मासिक पत्रिका सत्यार्थ सौरभ का सदस्य होना आवश्यक है।

☞ हल की हुयी पहेली अन्तिम तिथि से पूर्व न्यास कार्यालय में पहुँचे यह सुनिश्चित करें।

☞ अपना सत्यार्थ सौरभ सदस्यता क्रमांक हल की हुयी पहेली के ऊपर अवश्य अंकित करें।

☞ लिफाफे के ऊपर 'सत्यार्थप्रकाश पहेली क्रमांक' अवश्य अंकित करें।

☞ आयु, लिंग, योग्यता की कोई बाधा नहीं। आबाल-वृद्ध, नर-नारी, छोटे-बड़े सभी पात्र हैं।

☞ विश्व भर के लोगों से सत्यार्थ सौरभ मासिक पत्रिका के अन्तर्गत 'सत्यार्थकाश पहेली' में भाग लेने का अनुरोध है।

☞ वर्ष भर में एक ( १ ) के स्थान पर चार ( ४ ) पुरस्कारों के साथ ही नियमों में सकारात्मक परिवर्तन कर ऐसी व्यवस्था की गई है कि वर्ष में एक बार भाग लेने वाले/अथवा एक बार ही सफलता प्राप्त करने वाले भी पुरस्कार से वंचित न हों।

☞ पहेली का सही हल प्रेषित करने वाले प्रतिभागियों को ४ भागों में विभक्त किया जावेगा।

( अ ) सम्पूर्ण वर्ष में समस्त १२ पहेलियों का शुद्ध उत्तर प्रेषित करने वाले।
( ब ) सम्पूर्ण वर्ष में ८ से ११ पहेलियों का शुद्ध उत्तर प्रेषित करने वाले।
( स ) सम्पूर्ण वर्ष में ५ से ७ पहेलियों का शुद्ध उत्तर प्रेषित करने वाले।
( द ) सम्पूर्ण वर्ष में १ से ४ पहेलियों का शुद्ध उत्तर प्रेषित करने वाले।

☞ वर्षान्त में प्रत्येक समूह में से एक विजेता का चयन ( लाट्री द्वारा ) किया जाकर पुरस्कृत किया जावेगा।

☞ पुरस्कार राशि क्रमशः ₹५१००, ₹११००, ₹७०० तथा ₹५०० होगी। अन्य सभी नियम पूर्वानुसार।

## ₹5100 का पुरस्कार प्राप्त करें
## ''सत्यार्थ सौरभ'' के सदस्य बनें

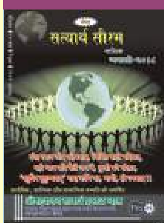

अविलम्ब बहुप्रशंसित पत्रिका 'सत्यार्थ सौरभ' के सदस्य बनें, जो पहले से सदस्य हैं अपना नवीनीकरण करावें और सत्यार्थ सौरभ में छप रही 'सत्यार्थप्रकाश पहेली' में भाग लेने की पात्रता प्राप्त करें और पावें ₹5100 का पुरस्कार।

**पूर्ण विवरण इसी पृष्ठ पर देखें।**

# विनम्रता एक श्रेष्ठ धन

बाल्यावस्था एवं युवावस्था को पार करते हुए व्यक्ति जब वृद्धावस्था के निकट पहुँच जाता है, तो उसका शरीर क्षीण और दुर्बल होने लगता है, किन्तु उस समय भी उसका मन उल्लसित रहता है। उसका वह उल्लास स्थायी सम्पत्ति के समान जीवन के अन्त तक उसका साथ देता है। उस समय भी उसकी विनम्रता का भण्डार समय के दुष्प्रभाव से बचा रहता है, अर्थात् उसके हृदय का उल्लास व उसकी विनम्रता नष्ट नहीं होते। इन दोनों के संयोग से ही उसे अपने जीवन के अतिरिक्त परलोक में भी उत्कृष्ट फल प्राप्त होता है। उल्लास और विनम्रता कभी नष्ट न होने वाली परमेश्वर की देन हैं, जिनके सम्मुख संसार की अन्य सम्पत्तियाँ नगण्य एवं तुच्छ हैं।

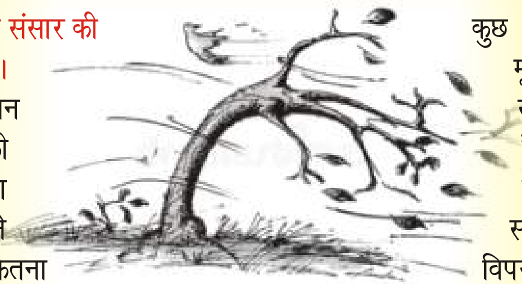

किसी व्यक्ति से जब कोई बलिदान मांगा जाये, तो वह उसकी परीक्षा की घड़ी होती है। उस समय यह देखा जाता है कि वह व्यक्ति अपने आदर्श की प्राप्ति के लिए कितना बलिदान करने को तैयार है। आप कह सकते हैं कि आप अमुक काम करने के लिए तैयार हैं, किन्तु प्रश्न यह है कि आप अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिए कितना बलिदान दे सकते हैं? कथनी और करनी में बहुत अन्तर होता है। अनेक लोग कहते हैं कि यदि उन्हें सामाजिक झंझटों से मुक्ति मिल जाये, उनके मार्ग में कोई बाधा न रहे, उन्हें बीमारी एवं दरिद्रता की आशंका न हो, तो वे भी अनेक महान् कार्य कर सकते हैं, परन्तु सच्चाई इसके सर्वथा विपरीत है। संसार में काम करने वालों की बहुत कमी है। महान् काम उन्होंने ही सम्पन्न किये हैं, जो प्रतिकूल परिस्थितियों में रहकर अपने जीवनोद्देश्य की प्राप्ति के निरन्तर प्रयास करते रहे। इसके साथ ही वे लोग अनेक कष्टों, संकटों और पीड़ाओं से भी घिरे रहे। अनेक व्यक्ति यह इच्छा करते हैं कि यदि उन्हें कोई अवसर प्राप्त हो, तो वे कोई महान् कार्य करके दिखा सकते है, परन्तु जब उन्हें अवसर प्राप्त होता है, तो वे कुछ भी नहीं कर पाते। सभ्यता और संस्कृति के शिखर पर पहुँचने वाले युवक और बुद्धिमान् व्यक्तियों ने घोर संघर्ष किये, जिनके कारण उन्हें अपने जीवन में कभी अवकाश के क्षण भी प्राप्त नहीं हुए।

सामान्यतः यह माना जाता है कि व्यस्त एवं सक्रिय जीवन-संघर्ष के कारण व्यक्ति की प्रवृत्ति नीरस हो जाती है व उसकी सौन्दर्यानुभूति नष्ट हो जाती है अथवा कुछ बुद्धिमान व्यक्ति ही जीवन की मृदुल भावनाओं की तह तक पहुँच सकते हैं, परन्तु वास्तविकता यह है कि संकटों और विपत्तियों में फंसे विद्वानों ने ही संसार के सर्वश्रेष्ठ एवं महान् ग्रन्थ लिखे हैं। विपरीत परिस्थितयों में पड़ने के बाद भी न तो व्यक्ति की प्यास बुझती है और न उसके आदर्श नष्ट होते हैं। जब तक व्यक्ति स्वयं न चाहे, कुछ नहीं किया जा सकता।

कुछ व्यक्ति जीवन को एक कला मानते हैं, परन्तु अनेक व्यक्ति जीवन के कार्यों को अनिच्छापूर्वक ही पूरा कर सकते हैं। वे अपने बहुमूल्य समय और प्रयत्न को निम्न उद्देश्यों तथा वासना की पूर्ति में ही नष्ट कर डालते हैं। यदि वे अपने प्रयत्नों को उत्साहपूर्वक पवित्र उद्देश्यों की पूर्ति में लगा दें तो वे भी महान् कार्य कर सकते हैं, जीवन को जीने की कला सीख सकते हैं। जीवित रहने के लिए व्यक्ति अपनी मानसिक और शारीरिक योग्यता को केवल धन कमाने के लिए ही नियोजित कर दे, इसे बुद्धिमानी नहीं कहा जा

सकता। परमात्मा ने जो जीवन आपको प्रदान किया है, वह इतना निरर्थक नहीं कि आप अपने मूल्यवान समय को भौतिक पदार्थों के संग्रह में ही नष्ट कर दें, किन्तु व्यक्ति का अधिकांश समय इस प्रकार के क्षणभंगुर पदार्थों के सग्रंह में ही नष्ट हो जाता है। फिर भी उसे इस बात की अभिलाषा होती है कि वह अपने महान् आदर्शों को प्राप्त कर ले। धन-दौलत और ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिए व्यक्ति बड़े से बड़ा बलिदान कर सकता है, लेकिन आत्मा की श्रेष्ठता और व्यापकता के लिए कुछ भी नहीं कर पाता। जीवन-रूपी गाड़ी को चलाने के लिए उद्देश्य और संकल्प एक सीमा तक ही आवश्यक होते हैं, किन्तु जब तक इच्छा-प्राप्ति के लिए प्रयास नहीं किया जायेगा, तब तक रेलगाड़ी नहीं चल सकेगी। साधारण गरम पानी से इंजन नहीं चल सकता। जब आपकी दृष्टि ही छोटे-छोटे पदार्थों पर टिकी रहेगी, तो आपको अपने आस-पास की चीजें ही दिखाई देंगी, उच्च और महान् उद्देश्य दूर दिखाई देंगे। ये छोटे-छोटे पदार्थ और साधारण उद्देश्य आपके लक्ष्य की प्राप्ति में बाधक बन जाते हैं। अनेक व्यक्ति साधारण जीवन व्यतीत कर रहे हैं, उनमें हेडक्लर्क, वकील अथवा इंजीनियर यदि सफल व्यक्ति भी होते हैं, परन्तु वे भी अपने उच्च आदर्श को प्राप्त नहीं कर पाते और साधारण पदार्थों की प्राप्ति के लिए अपने जीवन का बलिदान कर देते हैं, अपनी स्वाभाविक योग्यता को धन-दौलत आदि की वेदी पर निछावर कर देते हैं, अपने महान् उद्देश्यों को सोने-चांदी के चन्द सिक्कों के बदले बेच डालते हैं। इसीलिए वे मानव के रूप में भी असफल और अभागे ही सिद्ध होते हैं। यह आवश्यक नहीं कि धन को नैतिकता से अधिक महत्व दिया जाये, लेकिन साधारण प्रसिद्धि और सामान्य विचारों के कारण व्यक्ति लोक-कल्याण के मार्ग से भटक जाते हैं। आपका जीवन और उसका वास्तविक उद्देश्य सच्चे मोती के समान है। उसके सम्मुख सांसारिक सुख अत्यन्त तुच्छ है। मानव-जीवन का आदर्श अत्यन्त बहुमूल्य है और उसकी चमक के सम्मुख सोने-चांदी की चमक हेय है। लोक-कल्याण के लिए जिन लोगों के नाम सूर्य के समान दमकते रहे हैं, उनके सम्मुख सदा ही उच्च लक्ष्य और आदर्श स्थिर रहे है। उन्होंने अपने उद्देश्य से कभी मुँह नहीं मोड़ा और अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिए स्थिरता और दृढ़ता के साथ अपनी भरपूर शक्ति लगाते रहे। यदि आप भी अपनी आत्मा की उस आवाज को सुनते रहें, जो आपको सफलता के मार्ग की खोज करने के लिए प्रेरित करती है और उसी के अनुसार व्यवहार भी करें, तो आप कभी असफल नहीं हो सकते। जीवन में सर्वोच्च सफलता प्राप्त करने के लिए निष्ठा और सक्रियता महान् आदर्श हैं। अब वह समय दूर नहीं, जब मानव की सेवा और उसके सुधार के लिए सब कुछ बलिदान कर देने वाले व्यक्तियों को अत्यन्त सफल माना जावेगा।

धन का ढेर अथवा बैंक-बैलेंस नहीं, अपितु त्याग और बलिदान आपकी वास्तविक सम्पत्ति हैं। दानशील और परमार्थी व्यक्ति पारसमणि के समान होते हैं। उनका सम्पर्क होते ही कोई भी वस्तु सोना बन जाती है। ऐसे व्यक्तियों के सम्पर्क में रहने वाले प्रत्येक व्यक्ति को यह अनुभव हो जाता है कि उसने कुछ खोया नहीं है, अपितु कुछ पाया है। देखा जाये, तो जो व्यक्ति जीवन को सुखद बनाने एवं मानवता का कल्याण करने के लिए प्रयत्न करते हैं, वे ही कभी नष्ट न होने वाली सम्पत्ति हैं।

आज ऐसे ही अनेक यन्त्रों का आविष्कार हो चुका है, जिनके द्वारा शारीरिक शक्ति के खर्च में कमी आ गयी है, किन्तु सफल जीवन को मापने अथवा गुणों का अनुमान लगाने के लिए अभी तक कोई यन्त्र नहीं बना। यदि कोई ऐसा यन्त्र बन जाता, तो अनेक धनाढ्य लोग अपनी माप देखकर क्रोधित हो जाते तथा अनेक देशभक्त नेता अपनी प्रतिभा और सेवा का माप देखकर चकित रह जाते। किसी व्यक्ति की महत्ता का अनुमान उसकी आत्मा के मानदण्ड से किया जाना चाहिये। धन-सम्पत्ति, गगनचुम्बी इमारतें या बड़ी-बड़ी जागीरें नहीं, अपितु नैतिक मूल्यों के आधार पर ही किसी व्यक्ति का जीवन लाभदायक बन सकता है। सज्जनता, सहृदयता और संस्कृति के बल पर ही आप अपने विरोधियों का मुंह बन्द कर सकते हैं, धन-सम्पत्ति के बल पर नहीं।

फिलिप ब्रुक्स ने लिखा है कि प्रत्येक व्यक्ति को अपनी वर्तमान स्थिति में एक बार यह अनुभव अवश्य होता है कि उसे क्या बनना है। उसे अपने सम्पूर्ण जीवन का कल्पित स्रोत अवश्य दिखाई देता है। परमात्मा ने मानव के हृदय में किसी न किसी लक्ष्य की स्थापना की है। इसलिए कम-से-कम एक बार उसके मन में कल्याण, परोपकार एवं दूसरों की भलाई करने की इच्छा अवश्य जागृत होती है।

लेखक- आचार्य चन्द्रप्रभ जी

# ईश्वर के मुख्य पाँच काम हैं

खुशहाल चन्द आर्य

हमें ईश्वर द्वारा जितने भी काम होते हुए दिखाई देते हैं उन्हें हम पाँच भागों में बाँट सकते हैं। १. सृष्टि की उत्पत्ति, पालन व संहार करना २. जीवों को उनके कर्मानुसार फल देना ३. सृष्टि के आदि में वेदों का ज्ञान ४. मनुष्य की आत्मा में प्रेरणा देना ५. मनुष्य को सद्बुद्धि देना। इनकी अलग अलग व्याख्या इस भाँति है-

**१. सृष्टि की उत्पत्ति, पालन व संहार करना-** प्रलय की अवधि समाप्त होने के बाद ईश्वर सृष्टि की पुनः रचना करता है। जितने भी असंख्य जीव हैं, जिन जीवों की प्रलय में रहते हुए जिनकी अवधि पूरी हो गई है उन उनको नई सृष्टि में जन्म देता है और फिर जैसे जैसे अन्य जीवों की प्रलय में रहते हुए उनकी अवधि पूर्ण हो जाती है उसी हिसाब से वह जीव पृथ्वी पर आता रहता है। इस प्रकार से जीवों की उत्पत्ति का क्रम चालू रहता है। यहाँ यह जानने की बात है कि प्रलय की अवधि चार अरब बत्तीस करोड़ वर्ष है और सृष्टि की अवधि भी इतनी ही है। अब तक सृष्टि रचे लगभग दो अरब वर्ष हो गए हैं। इस प्रकार अन्दाज दो अरब बत्तीस करोड़ वर्ष सृष्टि को समाप्त होने में बाकी हैं। इतने वर्ष ईश्वर, सृष्टि का पालन और करेगा। फिर चार अरब बत्तीस करोड़ वर्षों तक प्रलय रहेगा, तत्पश्चात् ईश्वर पुनः सृष्टि रचेगा। जिस प्रकार बारह घंटों का दिन और बारह घंटों की रात होती है। रात में मनुष्य आराम लेकर फिर दिन में काम करने की ऊर्जा लेता है ठीक इसी प्रकार जीव भी सृष्टि में काम करके फिर प्रलय में उतने ही समय आराम करके सृष्टि के लिए काम करने की ऊर्जा लेता है। जैसे दिन-रात का समय बराबर है वैसे ही सृष्टि और प्रलय का समय भी बराबर है।

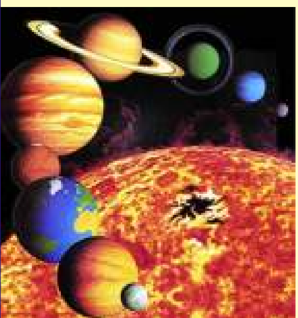

**२. जीवों को उनके कर्मानुसार फल देना-** दूसरा काम ईश्वर का जीवों को उनके कर्मानुसार फल देना है, यानि जीव कर्म करने में स्वतंत्र और फल पाने में ईश्वर की न्याय व्यवस्था के अधीन है, यानि परतंत्र हैं। यहाँ यह बात जानने की है कि योनि दो किस्म की होती है एक भोग-योनि और दूसरी कर्म-योनि। भोग-योनि का तात्पर्य यह है कि उसको उस भोग योनि में रहते हुए किए हुए कर्मों का फल नहीं मिलता। वे कर्म स्वाभाविक कर्म होते हैं जो ईश्वर की तरफ से सबको करने होते हैं। जैसे सोना-जागना, उठना-बैठना, खाना-पीना, खेलना-कूदना तथा सन्तान उत्पत्ति करना। ये कर्म पशु-पक्षी, कीट-पतंग, वृक्षादि में अधिक होते हैं। दूसरे कर्म नैमित्तिक कर्म हैं जिनको करने से ईश्वर अच्छे कर्मों का सुख के रूप में अच्छा फल और बुरे कर्मों का दुःख के रूप में बुरा फल देता है। इन कर्मों में पढ़ना-लिखना, किसी को दुःख देना-सुख देना, किसी की लाभ-हानि करना, किसी की प्रशंसा-निन्दा करना। ये कर्म मनुष्य अधिक करता है और पशु-पक्षी बहुत कम करते हैं। जैसे कुत्ता यदि मालिक की नजर से छिपाकर रोटी ले जाता है तो वह दुबक कर भय से निकलता है उसको भय है कि मालिक देख न लेवे और जब मालिक के बुलाने से रोटी ले जाता है तो वह बिना भय के मालिक के सामने से होकर जाता है। यह कुत्ते का नैमित्तिक ज्ञान है। यह इतना कम है कि ईश्वर इसका फल पशु-पक्षियों को नहीं देता। ये भोग योनि हैं, इनके किए हुए कर्मों का फल ईश्वर नहीं देता। मनुष्य में स्वाभाविक और नैमित्तिक दोनों ज्ञान हैं। स्वाभाविक ज्ञान बहुत कम केवल काम चलाने लायक है। जैसे उठना-बैठना, खाना-पीना, सोना-जागना व सन्तान-उत्पत्ति करना। यह सब काम मनुष्य भी करता है परन्तु इन कर्मों का फल ईश्वर नहीं देता। मनुष्य के नैमित्तिक कर्म जो सिखाने से सीखा जाता है जैसे

पढ़ना-लिखना, परोपकार करना, किसी से ईर्ष्या द्वेष करना। इसीलिए ईश्वर ने सृष्टि के आरम्भ में चार ऋषियों द्वारा चार वेद कहलवाये जिनको सुनकर या पढ़कर मनुष्य उत्तम कर्म करते हुए और बुरे काम छोड़ते हुए अपने अन्तिम लक्ष्य मोक्ष को प्राप्त कर सकें। ईश्वर मनुष्य को उसके किए कर्मों का फल कुछ तो उसके जीवन में ही दे देता है, बाकी शेष कर्मों का फल उसको पुनर्जन्म में जाति, आयु व भोग के रूप में देता है। जैसे किसी ने चोरी की उसको छह महीने की कैद हो गई तो इसी जन्म में उसको फल मिल गया। कुछ कर्मों के फल इस जन्म में नहीं मिल पाते हैं उनका फल उसको अगले जन्म में मिलेगा जिसको भाग्य भी कहते हैं।

**३. सृष्टि के आदि में वेदों का ज्ञान देना-** जैसा ऊपर में लिख चुके हैं कि कर्म दो किस्म के होते हैं। स्वाभाविक तथा नैमित्तिक। स्वाभाविक कर्मों का ईश्वर कोई फल नहीं देता। नैमित्तिक कर्म वे होते हैं जो सिखाने से सीखे जायँ। बिना सिखाये नहीं सीखे। यह देखा गया है कि किसी मनुष्य के बच्चे को जन्म होते ही पशुओं में रख दिया जावे तो वह पशुओं की बोली और पशुओं के कर्म करना ही सीखेगा, मनुष्य के नहीं। इसीलिए ईश्वर ने सृष्टि के आरम्भ में चार

ऋषियों जिनके नाम अग्नि, वायु, आदित्य व अंगिरा थे उनके मुख से चार वेद जिनके नाम ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद व अथर्ववेद हैं, क्रमशः उच्चारित करवाये। इन वेदों को सृष्टि के आरम्भ में जितने भी स्त्री पुरुष पैदा हुए थे सभी ने सुना परन्तु ब्रह्मा ऋषि जिसकी स्मरणशक्ति बहुत तेज थी उसने सुनते ही चारों वेद कंठस्थ कर लिए और वे आगे भी लोगों को सुनाते रहे फिर गुरु-शिष्य, पिता-पुत्र को सुनाते रहे और यह लिपिबद्ध करने के बाद भी बहुत से ब्राह्मण इनको कंठस्थ करके सुनाते रहे। इसलिए वेदों का दूसरा नाम श्रुति है।

**४. मनुष्य की आत्मा को प्रेरणा देना-** महर्षि दयानन्द ने अपने अमर ग्रन्थ 'सत्यार्थप्रकाश' में लिखा है कि जब मनुष्य कोई बुरा काम करने के लिए तैयार होता है तो उसकी आत्मा में लज्जा, भय व शंका उत्पन्न होती है और उसको वह काम न करने को कहती है परन्तु मनुष्य अपने हठ, दुराग्रह व विवशता के कारण वह काम कर बैठता है। इसी प्रकार मनुष्य कोई अच्छा व शुभ काम करने के लिए तैयार होता है तो उसको उत्साह, उमंग व आनन्द की अनुभूति होती है और उसको वह काम करने को कहती है। यह प्रेरणा ईश्वर की तरफ से होती है। इसलिए यह ईश्वर का चौथा काम हुआ।

**५. मनुष्य को सद्बुद्धि देना-** जब मनुष्य कोई काम करने के लिए तैयार होता है तब वह यदि ईश्वर का ध्यान करके, सच्चे मन से ईश्वर से कुछ माँगता है तो ईश्वर उसको सद्बुद्धि देकर उसको अच्छे काम करने के लिए उत्साहित करता है। इसलिए हम गायत्री मंत्र में सद्बुद्धि की याचना करते हैं। महर्षि दयानन्द कहते हैं कि मनुष्य को अपने पूरे प्रयास से कार्य करने के बाद भी किसी काम में सफलता नहीं मिलती है, उस परिस्थिति में ईश्वर से याचना करनी चाहिए। तब ईश्वर जरूर सुनता है। बिना पूरा प्रयास किये आलसी की ईश्वर कभी नहीं सुनता।

- गोविन्द राम आर्य एण्ड सन्स
१८०-महात्मा गाँधी रोड (दो तल्ला)
कोलकाता- ७००००७
चलभाष- ०९८३०१३५७९४

## संरक्षक मण्डल - सत्यार्थ सौरभ (₹११,०००)

स्वामी (डॉ.) ओमानन्द सरस्वती, श्रीमान् आनन्द कुमार आर्य, श्री भवानी दास आर्य, श्री सुरेश चन्द्र अग्रवाल, श्री रतिराम शर्मा, श्री दीनदयाल गुप्त, श्री बी.एल. अग्रवाल, श्री कै. देवरत्न आर्य, श्री चन्दूलाल अग्रवाल, श्री मिठाईलाल सिंह, श्री नारायण लाल मित्तल, श्री सुधाकर पीयूष, श्रीमती शारदा गुप्ता, आर्य परिवार संस्था कोटा, श्रीमती आभा आर्या, गुप्त दान दिल्ली, आर्यसमाज गाँधीधाम, गुप्तदान उदयपुर, श्री राजकुमार गुप्ता एवं सरला गुप्ता, श्री मोती लाल आर्य, श्री लक्ष्मण सराफ, श्रीमती पुष्पा गुप्ता, श्री जयदेव आर्य, श्री श्रवण कुमार गुप्ता, श्रीमती सरोज वर्मा, श्री विवेक बंसल, श्री दीपचंद आर्य, श्री एम.पी. सिंह, प्रो. आर.के.एरन, श्री खुशहालचन्द आर्य, श्री विजय तायलिया, श्री वीरेन्द्र मित्तल, स्वामी (डॉ.) आर्येशानन्द सरस्वती, स्वामी प्रवासानन्द सरस्वती, स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती, श्री राव हरिश्चन्द्र आर्य, श्री भारतभूषण गुप्ता, श्री कृष्ण चौपड़ा, श्री रामप्रकाश छाबड़ा, श्री विकास गुप्ता, श्री एम. विजेन्द्र कुमार टाक, श्री नरेश कुमार राणा, डॉ.मोतीलाल शर्मा, डी.ए.वी. एकेडमी, टाण्डा, श्री प्रधान जी, मध्यभारतीय आ. प्र. सभा, श्री रघुनाथ मित्तल, मिश्रीलाल आर्य कन्या इण्टर कॉलेज, टाण्डा, श्री प्रह्लादकृष्ण एवं श्रीमती प्रभा भार्गव श्री लोकेश चन्द्र टांक, श्रीमती गायत्री पंवार, डॉ. वेद प्रकाश गुप्ता, श्री वीरमुखी, डॉ. अमृतलाल तापड़िया, आर्य समाज हिरणमगरी, उदयपुर, श्री सुरेशपाल, यू.एस.ए., श्री राजेन्द्र कुमार सक्सेना, कोटा, श्रीमती सुमन सूद, कन्डा घाट (सोलन), माता शीला सेठी, न्यूजर्सी, डॉ. एस. के. माहेश्वरी, उदयपुर, श्री राजेश तिवारी (शिक्षक), ग्वालियर, श्रीमती सविता सेठी, चण्डीगढ़, डॉ. पूर्णसिंह डबास, नई दिल्ली, श्री बृज वधवा, अम्बाला शहर, श्री हजारी लाल आर्य, उदयपुर, डॉ. सत्यप्रकाश, हरदोई, राजेन्द्रपाल वर्मा, वडोदरा, प्रिन्सीपल डी. ए. वी. एच. जेड. एल. सी. सै. स्कूल, दरीबा (राजसमन्द), आचार्य आनन्द पुरुषार्थी, होशंगाबाद, श्री ओ३म् प्रकाश अग्रवाल, नोएडा, श्री भरत ओ३म् प्रकाश अग्रवाल, अहमदाबाद, श्री सुरेन्द्र कर्मचन्दानी, पुणे, डॉ. आनन्द कुमार शर्मा, नई दिल्ली, श्री रमेश चन्द्र गुप्ता, यू.एस.ए., श्री शुद्धबोध शर्मा; श्रीगंगानगर, श्री कन्हैया लाल आर्य, शाहपुरा

# जीने का बहाना ढूंढो

आज जिधर भी देखो लोगों में निराशा, हताशा, तनाव, उदासीनता, विमुखता आदि व्याप्त हैं। लोगों के पास सब कुछ है, फिर भी और पाने के लालच में रात दिन लगे हुए हैं। लेकिन फिर खुशी, संतोष, तृप्ति नाम की चीज उनमें देखने को नहीं मिलती। जिसे भी देखो किसी ना किसी बात की शिकायत कर रहा है। कोई अपने परिवार से खुश नहीं, किसी को सरकार पंसद नहीं, किसी को पड़ोसियों से शिकायत है, किसी को कोई मौसम रास नहीं आता। मन भटकता रहता है। किसी भी काम में चित नहीं लगता। मन बहलाने के लिये आदमी पहाड़ों पर जाता है, धार्मिक स्थानों की यात्रा करता है, लेकिन फिर भी दिल है कि मानता नहीं। कभी-कभी सोये रहने को दिल करता है, कभी-कभी यूँही घूमने-फिरने को दिल करता है, लेकिन चैन फिर भी नहीं। समझ में नहीं आता कि क्या करें या क्या न करें। इसका सीधा मतलब यह है कि हमें जीना नहीं आता। 'मदर इंडिया' में नरगिस ने कहा था 'दुनिया में हम आये हैं, तो जीना ही पड़ेगा। जीवन है अगर ज़हर तो पीना ही पड़ेगा। 'मेरा नाम जोकर' में राजकपूर ने कहा, 'जीना यहाँ, मरना यहाँ। इसके सिवा जाना कहाँ' बात भी सच्ची है। यह दुनिया अच्छी है या बुरी है, है तो हमारी, यह जो भी है इसे हमीं ने ही बनाया है। इसी में ही हमने रहना है। बेशक लोग स्वार्थी, अहंकारी, गुस्सैल हैं, विश्वास के काबिल नहीं। फिर भी काम तो यूँही चलाना पड़ेगा। हर समय रोने-पीटने, चीखने-चिल्लाने, शिकायत करने से बात बनने वाली नहीं है। हमें जीने के लिये बहाना ढूँढना पड़ेगा। साथी छोड़ जाये, काम धन्धा चौपट हो जाये, शरीर में कोई कमी हो जाये, जीना तो फिर भी पड़ेगा ही। यह जीवन एक महाभारत है। अर्जुन रूपी मन चाहे ना भी चाहे, हालात से मुकाबला तो फिर भी करना ही पड़ेगा। गीता का उपदेश देने के लिये अब जीवन रथ को हाँकने वाला कृष्ण रूपी घनिष्ठ मित्र भी नहीं है, फिर भी जीना तो है। ऐसे में मन को समझाने, मन को नियंत्रित करने तथा ठीक-ठाक तरीके से जीने के लिये कोई ना कोई बहाना तो ढूँढना ही पड़ेगा। विपरीत परिस्थितियों, समस्याओं तथा कठिनाईयों से भयभीत होकर परमात्मा की बसाई इस दुनिया से पलायन करने या फिर आत्महत्या करके छुटकारा नहीं मिलता।

जीने का नया ढंग सीखना पड़ेगा। जीने के कई बहाने हैं, उनमें अपार खुशी, संतोष तथा तृप्ति मिल सकती है। दूसरों का भला करके अलौकिक खुशी मिलती है। एक आदमी घास के गट्ठड़ को सिर पर रखने के लिये इधर-उधर किसी व्यक्ति की मदद के लिये देख रहा है। अब उधर से गुजरते हुये अगर उसकी मदद करते हुये उस गट्ठड़ को उसके सिर पर रखवाने में आप उसकी मदद कर देते हो तो उसका काम आसान हो जाता है। वह आपका शुक्रिया तो अदा करता ही है लेकिन उसकी मदद करके आपको कुछ खुशी का एहसास भी होता है जिसका मुकाबला भौतिक पदार्थों का सेवन करने की खुशी से कहीं ज्यादा है। कई लोगों को बीमार, आवारा जानवरों का इलाज करके खुशी मिलती है। किसी को सवेरे

शाम सैर करके खुशी मिलती है। कोई फालतू समय पुस्तकालय में बिताकर मन बहला रहा है। किसी को अनाथालय, पिंगलवाड़े, अस्तपताल में लोगों की सेवा करने में ही भगवान के दर्शन होते हैं। कोई-कोई आदमी डाकखाने में अनपढ़ देहाती लोगों की वहाँ काम कराने में मदद करता है। किसी बुजुर्ग आदमी को सड़क पार करना भी पुण्य का काम है। कोई गरीब बच्चों को स्कूल भेजने का खर्च उठाता है। कोई उन्हें मुफ्त में पढ़ाता है। कोई व्यक्ति वेश्यावृत्ति छुड़वाने तथा पुनः स्थापित करने में अभागी महिलाओं की मदद करता है। जीने के बहुत सारे बहाने हैं। महात्मा बुद्ध ने कहा था 'दुनिया दुःखों का घर है।' गुरु नानक देव जी का कहना था 'नानक दुखिया सब संसार।' यह सब तो ठीक है। लेकिन जब हम हर समय केवल अपने लिये ही नहीं सोचते, बल्कि दूसरे जरूरतमंद तथा मुसीबत में पड़े लोगों के लिये भी कुछ ठोस काम बिना स्वार्थ या लालच के करते हैं तो जीवन का मतलब बदल जाता है। लेकिन मेरा मानना है कि परहित कार्य करते हुए हमें अपने पारिवारिक तथा सांसारिक कर्तव्यों को भी करते रहना चाहिये। सयाने लोग कहते हैं कि हमें रोज कम से कम एक भलाई का काम जरूर करना चाहिये। जब सब कुछ होते हुये भी सच्चा सुख ना मिले तो समझ लो कि अब समय आ गया है जब आप जीने के लिये कोई और बहाना ढूँढे जिसके तहत किसी का कुछ ना कुछ बिना स्वार्थ या लालच के भला हो सके।

सदा रोने धोने तथा किसी ना किसी बात पर कोई शिकायत करते रहने से कोई फायदा नहीं। मुस्कराईये, जवाब मुस्कराहट से ही मिलेगा।

यही है जीने का ढंग।


-प्रो. शामलाल कौशल
मकान नं. ९७५-बी/२०
राजीव निवास, शक्ति नगर, ग्रीन रोड, रोहतक- १२४००१ ( हरि. )
चलभाष- ०९४१६३५९०४५


# महर्षि के प्रति

ऋषि बोध दिवस पर विशेष

धधक उठी संसृति पर, दावानल नाश की
जनता अति व्याकुल थी, चिन्ता विनाश की
बुझा दी वेद वर्षा से विनाशाग्नि,
चमका दी आशा की सुखद रश्मि
शान्त हुआ फिर क्रन्दन, तुम्हें शत्-शत् वन्दन
संस्कृति के आधार वसुधा को, स्वर्ग के अप्रतिम उपहार
टंकारा के कीर्तिकार अभिनन्दन ! शत् शत् वन्दन
प्रतिध्वनि सर्वान्तर्यामी की, विरजानन्द धाम की
अविनाशी अभिराम की, हे महर्षि युगद्रष्टा।
वेद विहित तेरी वाणी ने, कमनीय कुसुम कल्याण ने
फूंका है नवजीवन, तुम्हें शत् शत् वन्दन
पाखण्ड खण्डन सत्य अर्थ अभिनन्दन
नमन आर्य नन्दन अभिनन्दन ! शत् शत् वन्दन
आत्मा के दर्पण में, प्रकृति के कण-कण में
ईश्वर के दिव्यावरण में, लिखा एक-एक समुल्लास
दिया ज्ञान का प्रकाश, धन्य दूरदर्शी नयन
भवों के चन्दन वन, तुम्हें शत् शत् वन्दन
सच्चे शिव से किया वसुधा का शृंगार
सत्यार्थ प्रकाश का सुलभ आभार
अपरम्पार अद्यतन अभिनन्दन !
शत् शत् वन्दन ! शत् शत् वन्दन !

- डॉ. सत्यदेव आजाद

# वैश्विक उन्नति का आधार भारतीय संस्कृति

दुनिया में भौतिक उन्नति के नित नए कीर्तिमान स्थापित हो रहे हैं। व्यक्ति जहाँ चन्द्रमा से बहुत ऊपर तक पहुँच गया है वहीं समुद्र तल की गहराइयों की सीमाओं को भी लाँघ चुका है। तकनीक के माध्यम से घर बैठे सफलतापूर्वक ड्रोन हमले संभव हुए हैं तो वहीं व्यक्ति विकास के नित नए साधनों का आविष्कार किया जा रहा है। किन्तु देखने में आ रहा है कि दुनिया भर में स्वार्थसिद्धि और भौतिक उन्नति करते-करते व्यक्ति अपने प्राकृतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक व नैतिक उत्तरदायित्वों को भूलता जा रहा है। वह यह भी भूल जाता है कि भगवान द्वारा निर्मित इस प्रकृति के संसाधनों पर सृष्टि के अन्य प्राणियों का भी उतना ही अधिकार है जितना तुम्हारा। एक सुसंस्कृत समाज में रहने वाले संस्कारयुक्त व्यक्ति के प्रत्येक क्रियाकलाप में विश्व कल्याण की भावना सदैव सन्निहित रहती है।

संस्कृति किसी भी समाज या राष्ट्र का आइना होती है। हालांकि संस्कृति की अवधारणा इतनी विस्तृत है कि उसे एक वाक्य में परिभाषित करना सम्भव नहीं है। तथापि, यह कहा जा सकता है कि मानव जीवन के दिन-प्रतिदिन के आचार-विचार, जीवन शैली, कार्य-व्यवहार, धार्मिक, दार्शनिक, कलात्मक, नीतिगत कार्य-कलापों, परम्परागत प्रथाओं, खान-पान, संस्कार इत्यादि के समन्वय को संस्कृति कहा जाता है। अनेक विद्वानों ने संस्कार के परिवर्तित रूप को ही संस्कृति के रूप में स्वीकार किया है।

भारतीय संस्कृति के प्रेरणादाई बिन्दुओं पर विचार करें तो पाएँगे कि यह उदार, गुणग्राही व समन्वयशील रही है। संवेदना, कल्पना, आचरण, भाव, संयम, नैतिकता, उदारता व आत्मीयता के तत्व अविच्छिन्न रूप से जुड़े हुए हैं। नीति और सदाचार की रक्षार्थ कर्मफल का सिद्धान्त व पुनर्जन्म के प्रति आस्था एक ऐसी उत्तम दार्शनिक ढाल है जो व्यक्ति को अनैतिकता की ओर जाने ही नहीं देती। ईमानदारी, अतिथि सत्कार, दाम्पत्य मर्यादाओं की कठोरता, पुण्य, परोपकार, पाप के प्रति घृणा, जीव दया जैसे तत्व घोर दरिद्रता और सामाजिक अव्यवस्था के रहते हुए भी चिरस्थाई रहते हैं।

वास्तव में संस्कृति ऐसी आदर्श शृंखला है जिसे कोई भी झुठला नहीं सकता यहाँ तक कि व्यवहार में उन सिद्धान्तों के प्रतिकूल चलने वाला भी खुले रूप में उसका विरोध नहीं कर सकता। गंभीरता से विचार करें तो हम पाएँगे कि चोर अपने यहाँ दूसरे चोर को नौकर नहीं रखना चाहता। व्यभिचारी अपनी कन्या का विवाह व्यभिचारी के साथ नहीं करता और न अपनी पत्नी को किसी ऐसे व्यक्ति के साथ घनिष्ठता बढ़ाने देता है। ग्राहकों के साथ धोखेबाजी करने वाला दुकानदार भी वहाँ से माल नहीं खरीदता जहाँ धोखेबाजी की आशंका रहती है। झूठ बोलने का अभ्यासी भी सम्बन्धित लोगों से यही अपेक्षा करता है कि वे उसे सच बात बताया करें। अनैतिक आचरण करने वालों से पूछा जाय कि आप न्याय-अन्याय में से, उचित-अनुचित में से, सदाचार-दुराचार में से किसे पसन्द करते हैं तो वह नीति पक्ष का ही समर्थन करेंगे। अपने सम्बन्ध में परिचय देते समय हर व्यक्ति अपने को नीतिवान के रूप में ही प्रकट करता है। इन तथ्यों पर विचार करने से प्रकट होता है कि भारतीय संस्कृति की अन्तरात्मा एक ऐसी

दिव्य परम्परा के साथ गुँथी हुई है जिसे झुठलाना किसी के लिए भी, यहाँ तक कि पूर्ण कुसंस्कारी के लिए भी सम्भव नहीं हो सकता। वह अपने दुराचरण के बारे में अनेक विवशताएँ बताकर अपने को निर्दोष सिद्ध करने का प्रयत्न तो कर सकता है, पर अनीति को नीति कहने का साहस नहीं कर सकता। यही कारण है जिसके आधार पर भारतीय संस्कृति को विश्व की कालजयी संस्कृति कहा गया है।

कोई अन्य हमारा भाग्य विधाता नहीं है बल्कि व्यक्ति अपना विकास अपने परिश्रम से स्वयं ही कर सकता है। वह अपने सुख-दुःख दोनों का कर्ता स्वयं ही तो है। यम, नियम, योग, ध्यान, प्राणायाम, आसन इत्यादि से जहाँ व्यक्ति स्वयं को मजबूत करता है वहीं '**सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामया**' या '**इदम् राष्ट्राय, इदं न मम**' या '**परम वैभवन्ने, त्वमेव तत् स्वराष्ट्रं**' की प्रार्थना के द्वारा सृष्टि के सभी प्राणियों के कल्याण की कामना करता है।

**मातृवत परदारेषु, परद्रव्येषु लोष्ठवत...** यानि मातृशक्ति को देवी रूप में मानना तथा दूसरे के धन को मिट्टी के समान मानना हमारी संस्कृति की विशेषताएँ हैं।

वर्ण व्यवस्था जन्म-जाति के साथ जुड़कर भले ही आज विकृत हो कर बदनाम हो, पर उसके पीछे अपने व्यवसाय

तथा अन्य विशेषताओं को परम्परागत रूप से बनाये रहने की भारी सुविधा है। आज छोटे-छोटे कामों के लिए नये सिरे से ट्रेनिंग देनी पड़ती है जबकि प्राचीन काल में वह प्रशिक्षण वंश परम्परा के आधार पर बचपन में आरम्भ हो जाता था और अपने विषय की प्रवीणता सिद्ध करता था। आश्रम व्यवस्थान्तर्गत ब्रह्मचर्य और गृहस्थ में बीतने वाली व्यक्ति की आधी आयु भौतिक प्रगति के लिए और आधी आयु आत्मिक ज्ञान के संवर्धन के लिए है। वानप्रस्थ और संन्यास आश्रम आत्मिक श्रेष्ठता के संवर्धन तथा लोकमंगलकारी कार्यों में योगदान देने के लिए निश्चित हैं। इससे व्यक्ति और समाज दोनों की श्रेष्ठता समुन्नत रहती है।

प्राचीन काल से ही हमारे यहाँ तीर्थाटन द्वारा स्वास्थ्य संवर्धन, अनुभव वृद्धि, स्वस्थ मनोरंजन, व्यवसाय वृद्धि, अर्थ वितरण जैसे अनेक लाभ बताए हैं। देवदर्शन के बहाने तीर्थयात्री गाँव-गाँव, गली मुहल्लों में जाकर जहाँ धार्मिक जीवन की प्रेरणा देते हैं, वहीं साधु-संतों, ब्राह्मणों इत्यादि के आतिथ्य सत्कार एवं दान दक्षिणा के पीछे भी यही भावना भरी हुई है कि लोक सेवा के लिए स्वयं समर्पित कार्यकर्त्ताओं को किसी प्रकार की आर्थिक तंगी का सामना न करना पड़े।

पर्वों, त्योहारों और जयन्तियों की अधिकता भारतीय संस्कृति की ऐसी विशेषता है जिसके सहारे सत्परम्पराओं को अपनाये रहने और प्रेरणाओं को हृदयंगम किये रहने के लिए पूरे समाज को निरंतर प्रकाश मिलता है। व्रत-उपवासों से जहाँ उदर रोगों की कारगर चिकित्सा की पृष्ठभूमि बनती है वहीं मनः शुद्धि का भाव भी जुड़ा है। प्रत्येक शुभकर्म के साथ अग्निहोत्र (हवन) जुड़ा रहने के पीछे भी लोगों को यज्ञीय जीवन जीने की प्रेरणा सन्निहित है।

आज के भौतिक चिन्तन ने ब्रह्माण्ड की परिकल्पना एक विराट मशीन के रूप में की है। विकास के नाम पर २४ घंटे बिजली और चमचमाती सड़कों का जाल बिछाने के अलावा विश्व के अधिकांश देश मशीनों के द्वारा अधिकाधिक

उत्पादन व उत्पादित सामान की खपत के लिए मंडियों की तलाश के साथ अधिकाधिक पूँजी जुटाने की दौड़ में लगे हैं। इसके लिए प्रकृति का निर्मम दोहन किया जा रहा है। कारखानों का जहरीला धुँआ हवा को तथा केमीकलरूपी जहर नदियों के पानी को जहरीला बना रहा है। रासायनिक खाद ने तो हमारी जमीन को ही जहरीला बना दिया है। परिणामतः व्यक्ति को न तो श्वसन हेतु साफ हवा, न पीने को साफ पानी और न ही पेट भरने को पौष्टिक रोटी व

सब्जी ही उपलब्ध है। बाजारवाद और तथाकथित विकास ने हाथ मिलाकर हवा, पानी, जमीन को जहरीला बना दिया है। इस सब के उलट भारतीय सांस्कृतिक दर्शन सदैव प्रकृति का पुजारी रहा है। इसमें कहा गया है कि प्राकृतिक संसाधनों का उचित उपयोग तो करें किन्तु उसके दोहन की स्पष्ट मनाही है। शायद इसी कारण हमारे यहाँ पेड़-पौधों, नदियों-तालाबों, खेत-खलिहानों, पशु-पक्षियों, कूप-बावड़ियों इत्यादि को समय समय पर पूजे जाने का विधान है। जिससे उनमें हमारी आस्था गहरी बनी रहे और उनके अनावश्यक दोहन से बचें।

मध्य प्रदेश के भीमबेटका में पाये गये शैलचित्र, नर्मदा घाटी में की गई खुदाई तथा सिन्धु घाटी की सभ्यता के विवरणों से भी प्रमाणित होता है कि हजारों वर्ष पहले उत्तरी भारत के बहुत बड़े भाग में एक उच्च कोटि की संस्कृति का विकास हो चुका था। भारतीय संस्कृति की सहिष्णुता एवं उदारता के कारण ही बाहर से आने वाले शक, हूण, यूनानी एवं कुषाण जैसी प्रजातियों के लोग भी घुलमिल कर अपनी पहचान खो बैठे। अन्य देशों की संस्कृतियाँ तो समय की धारा के साथ-साथ नष्ट होती रही हैं, किन्तु भारत की संस्कृति आदि काल से ही अपने परम्परागत अस्तित्व के साथ अजर-अमर बनी हुई है। भारतीय संस्कृति के इस लचीले स्वरूप में जब भी जड़ता की स्थिति निर्मित होती हुई नजर आई, तब किसी न किसी महापुरुष ने इसे गतिशीलता प्रदान की। प्राचीनकाल में भगवान बुद्ध और भगवान महावीर, मध्यकाल में जगद्गुरू शंकराचार्य, कबीर, गुरु नानक तथा आधुनिक काल में स्वामी दयानन्द, स्वामी विवेकानन्द एवं महात्मा ज्योतिबा फुले इत्यादि द्वारा किये गए प्रयास इस संस्कृति की महत्त्वपूर्ण धरोहर बन गए।

सम्पूर्ण भारत में जन्म, विवाह और मृत्यु के संस्कार, रीति-रिवाज, आचार-व्यवहार और तीज-त्यौहारों में भी समानता है। १४०० बोलियों तथा औपचारिक रूप से मान्यता प्राप्त १८ भाषाओं की विविधता के बावजूद, संगीत, कला, साहित्य, नृत्य और नाट्य के मौलिक स्वरूपों में आश्चर्यजनक समानता है। संगीत के सात स्वर और नृत्य के त्रिताल सम्पूर्ण भारत में समान रूप से प्रचलित हैं। भारत अनेक धर्मों, सम्प्रदायों, मतों और पृथक् आस्थाओं एवं विश्वासों का महादेश है, तथापि इसका सांस्कृतिक समुच्चय और अनेकता में एकता का स्वरूप संसार के अन्य देशों के लिए न सिर्फ विस्मयकारी बल्कि अनुपालन के योग्य बन गया है। आज दुनिया के अनेक देशों ने अपनी सुख सम्पदा और तरक्की के असीमित साधन जुटा लिए हों किन्तु सच्चा सुख, शान्ति, मानवता, आध्यात्मिकता और प्रकृति प्रेम जो भारत में दिखाई देता है वह अन्यत्र कहीं नहीं। क्योंकि भारतीय संस्कृति जिन मूल गुणों व मूल्यों से भरी हुई है वही इसे महान् बनाते हैं। आज जहाँ विश्व की हर बड़ी से बड़ी समस्या का समाधान हमारे सांस्कृतिक मूल्यों में निहित है वहीं वैश्विक उन्नति का आधार भी भारतीय संस्कृति ही है।

- विनोद बंसल, राष्ट्रीय प्रवक्ता विश्व हिन्दू परिषद

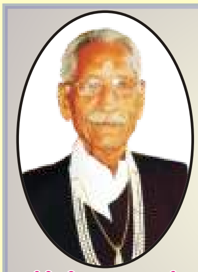
सुख-समृद्धि-कीर्ति बढ़े,
सपने हों साकार।
नए साल में पाएँ हर दिन,
खुशियों का उपहार।।
सत्यार्थ सौरभ
घर-घर पहुँचावें
कर्मयोगी महाशय धर्मपाल
अध्यक्ष - न्यास

अनेक विशेषताओं से युक्त १८८४ के मूल सत्यार्थप्रकाश के सर्वाधिक नजदीक, तत्कालीन शैली का संरक्षण, मुद्रण अशुद्धियों से रहित
सत्यार्थप्रकाश
अवश्य खरीदें।
घाटे की पूर्ति पूर्ववत् दानदाताओं के सहयोग से ही संभव होगी। आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि सत्यार्थप्रकाश प्रेमी इस कार्य में आगे आवेंगे।
श्रीमद् दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास, नवलखा महल, गुलाबबाग, उदयपुर - ३१३००१
अब मात्र कीमत ₹ 45 में
४००० रु. सैंकड़ा
शीघ्र मंगवाएँ

# समाचार

### गायत्री महायज्ञ एवं आर्य महासम्मेलन सम्पन्न

केन्द्रीय आर्य युवक परिषद् मध्यप्रदेश के तत्वावधान में १०८ कुण्डीय गायत्री महायज्ञ एवं आर्य महासम्मेलन इन्दौर के गाँधी हॉल के प्रांगण में सम्पन्न हुआ, जिसमें हजारों लोगों ने भाग लिया। इस अवसर पर आर्य प्रतिनिधि सभा आन्ध्रप्रदेश के प्रधान प्रो. विट्ठल राव आर्य ने कहा कि श्रद्धा और भक्ति के साथ यज्ञ करने से आध्यात्मिक एवं सामाजिक उन्नति होती है। पर्यावरण शुद्धि चाहे बाह्य या आन्तरिक हो दोनों के लिए यज्ञ ही सर्वोत्तम साधन है। अतः भारतीय समाज विशेषकर वेद में विश्वास रखने वालों को घर-घर यज्ञ करना चाहिए। कार्यक्रम की अध्यक्षता पंडित योगेन्द्र महन्त द्वारा की गई तथा इस अवसर पर श्री बाबूलाल जोशी, श्रीमती स्नेहलता हाण्डा, श्री नरेन्द्र आर्य एवं श्री विजय मालवीय का नागरिक अभिनन्दन किया गया। योगाचार्य उमाशंकर (सूरत) ने कहा कि वेद, यज्ञ, योग का प्रचार प्रसार करना ही हमारा मुख्य उद्देश्य है। इन कार्यों को करके हम ऋषि-ऋण से मुक्त हो सकते हैं। कार्यक्रम के मुख्य संयोजक आचार्य भानुप्रताप वेदालंकार ने सभी का आभार प्रकाशित किया।

– श्रीमती गायत्री सोलंकी, मंत्री आर्य समाज, संचार नगर, इन्दौर

### आर्यसमाज जिला सभा कोटा द्वारा 'सत्यार्थ प्रकाश' वितरण

आर्यसमाज जिला सभा कोटा द्वारा महर्षि दयानन्द सरस्वती कृत अमर ग्रंथ 'सत्यार्थ प्रकाश' कोटा के जनप्रतिनिधियों व गणमान्य जनों को भेंट किए गए। आर्य समाज के प्रतिनिधियों ने उनको वेदमंत्रोच्चारण के साथ केसरिया पटका पहनाकर गायत्री मंत्र भावार्थ सहित लिखित स्मृतिचिह्न भेंट किए। आर्य समाज के जिला प्रधान अर्जुनदेव चड्ढा ने बताया कि अमर ग्रंथ सत्यार्थ प्रकाश जन-जन तक पहुँचाने का कार्य निरन्तर किया जा रहा है। जिससे आर्य समाज की वैदिक विचारधारा

का प्रचार-प्रसार किया जा सके। इस दौरान विधायक प्रह्लाद गुंजल, न्यास अध्यक्ष रामकुमार मेहता, एस.के. अग्रवाल को सत्यार्थ प्रकाश भेंट किए गए।

इस अवसर पर विधायक प्रह्लाद गुंजल ने कहा कि आर्य समाज की विचारधारा प्राणीमात्र के कल्याण की है। सत्यार्थ प्रकाश के विचार क्रान्तिकारी हैं। आजादी की लड़ाई में अनेक व्यक्तियों ने इसे पढ़कर क्रान्ति की अलख जगाने का कार्य किया है। इस अवसर पर जिला प्रधान अर्जुनदेव चड्ढा, जिला मंत्री कैलाश बाहेती, भीमगंज मण्डी के प्रधान प्रेमनाथ कौशल, डी.ए.वी. की प्राचार्या श्रीमती सरितारंजन गौतम, पं. रामदेव शर्मा, शोभाराम आर्य, लालचन्द आर्य, आर.सी. आर्य, राधाबल्लभ राठौर, वेदमित्र वैदिक, पं. श्योराज वशिष्ठ, किशन आर्य समेत कई लोग मौजूद रहे।

### गुरुकुल प्रभात आश्रम का वार्षिकोत्सव सम्पन्न

१३ व १४ जनवरी को प्रभात आश्रम का वार्षिकोत्सव विविध कार्यक्रमों के साथ सम्पन्न हुआ। दिनांक १३ जनवरी को देश के विभिन्न विश्वविद्यालयों से पधारे मूर्धन्य विद्वानों ने 'उपनिषदों में विविध विद्याएँ' विषय पर सम्पन्न राष्ट्रीय वैदिकशोध संगोष्ठी में अपने विचार प्रस्तुत किये। संगोष्ठी में दिल्ली विश्वविद्यालय के संस्कृत विभागाध्यक्ष प्रो. शारदा व पंकज कुमार मिश्र आदि ५० विद्वान् सम्मिलित हुए। वहीं १४ जनवरी को मकर सौर संक्रान्ति के पावन पर्व पर नए ब्रह्मचारियों का उपनयन व वेदारम्भ संस्कार सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर गुरुकुलीय छात्रों ने शारीरिक बलप्रदर्शन व आश्चर्यचकित कर देने वाले आसनों का प्रदर्शन मल्लखम्भ पर किया। गुरुकुल के कुलाध्यक्ष पूज्य श्री स्वामी विवेकानन्द सरस्वती जी महाराज ने कहा कि- 'उपनिषदों में मधु एवं माधवी दोनों विद्याएँ हैं', मधु अर्थात् स्नेह, जब यह स्नेह गुरु का शिष्य के प्रति होता है तो वह मधुविद्या और वही स्नेह जब शिष्य का गुरु के प्रति होता है तो वह माधवीविद्या है और यह स्नेह आज भी गुरु और शिष्य के मध्य अत्यावश्यक है। साथ पूज्य गुरुजी का कहना है कि 'उत्सव लोगों के परस्पर मेल का स्थल है तथा आज यह मेलभाव देश की अखण्डता व अस्मिता को बनाए रखने के लिए अत्यावश्यक है।'

### श्री कृष्ण कुमार यादव 'सृजन साहित्य सम्मान' से सम्मानित

साहित्य के क्षेत्र में उत्कृष्ट योगदान, समर्पण भाव एवं निरन्तर साधना द्वारा समाज को अविरल योगदान देने हेतु चर्चित ब्लॉगर और साहित्यकार एवं सम्प्रति राजस्थान पश्चिमी क्षेत्र, जोधपुर के निदेशक डाक सेवाएँ श्री कृष्ण कुमार यादव को ३ दिसंबर को सृजन सेवा संस्थान, श्री गंगानगर, राजस्थान द्वारा 'सृजन साहित्य सम्मान' से

सम्मानित किया गया। इस अवसर पर उन्हें शाल ओढ़ा कर तथा सम्मान पत्र एवं साहित्य भेंट करके सम्मानित किया गया। संस्थान के अध्यक्ष डॉ. कृष्ण कुमार 'आशु' ने कहा कि प्रशासनिक दायित्वों के साथ-साथ साहित्य सृजन और ब्लॉगिंग के क्षेत्र में श्री कृष्ण कुमार यादव का योगदान महत्वपूर्ण है। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में अनवरत प्रकाशित होने के साथ-साथ, अब तक आपकी ७ पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। देश-दुनिया में शताधिक सम्मानों से विभूषित श्री यादव एक लम्बे समय से ब्लॉग और सोशल मीडिया के माध्यम से भी हिन्दी साहित्य एवं विविध विधाओं में अपनी रचनाधर्मिता को प्रस्फुटित करते हुये अपनी व्यापक पहचान बना चुके हैं।

कार्यक्रम में डॉ. अरुण शहैरिया ताइर, सुरेन्द्र सुन्दरम, कृष्ण वृहस्पति, डॉ. सन्देश त्यागी, दीनदयाल शर्मा, दुष्यन्त शर्मा, ओ.पी. वैश्य, मनी राम सेतिया, रंगकर्मी भूपेन्द्रसिंह, हरविन्द्र सिंह, राकेश मोंगा, दीपक गडई सहित अनेक साहित्यकार एवं बुद्धिजीवी मौजूद रहे।

– डॉ. सन्देश त्यागी, सचिव-सृजन सेवा संस्थान, श्री गंगानगर, राजस्थान

### यजुर्वेद पारायण यज्ञ संपन्न

न्यास के कार्यकारी अध्यक्ष श्री अशोक आर्य के निवास स्थान पर दिनांक १२ जनवरी से १७ जनवरी २०१८ तक, आर्य जगत् के सुप्रसिद्ध वैदिक विद्वान् आचार्य वेद प्रकाश श्रोत्रिय के ब्रह्मत्व में यजुर्वेद पारायण यज्ञ अत्यन्त श्रद्धोपेत वातावरण में सम्पन्न हुआ। आर्ष गुरुकुल गौतमनगर, दिल्ली से सम्बन्धित वेदपाठी विद्वान् श्री कुलदीप शास्त्री एवं श्री शैलेश शास्त्री ने शुद्ध तथा चित्ताकर्षक वेदपाठ से कार्यक्रम को गरिमा प्रदान की। आचार्य श्रोत्रिय जी के सारगर्भित व उपादेय प्रवचन यज्ञ के सर्वाधिक महत्वपूर्ण भाग थे। पवित्र वेद में सन्निहित मानव-निर्माण, परिवार निर्माण, समाज-निर्माण के सुनहरे सूत्रों के रहस्य व सन्देश को जब आचार्य श्री प्रस्तुत करते थे तो श्रोता मंत्रमुग्ध हो जाते थे। सभी परिवार याज्ञिक परिवार बनें, इस सन्देश के साथ दिनाक १७ जनवरी को यजुर्वेद पारायण यज्ञ की पूर्णाहुति हुयी।

– नवनीत आर्य, नवलखा महल, गुलाबबाग, उदयपुर

### आर्य समाज ,कुन्हाड़ी द्वारा 'मकर संक्रान्ति' पर्व मनाया गया

आर्य समाज ,कुन्हाड़ी द्वारा 'मकर संक्रान्ति' पर्व नगर की समस्त आर्य

समाजों का सामूहिक रूप से समारोह पूर्वक मनाया गया। विशेष यज्ञ तिल, रेवड़ी व गजक की आहुतियों से हुआ तथा बिजनौर के सुप्रसिद्ध भजनोपदेशक पं. भीष्म आर्य ने भजनों की स्वर लहरी से श्रोताओं को भावविभोर कर दियाा। इस अवसर पर ८०वें जन्मदिन पर श्री राजेन्द्र सक्सेना तथा राजेन्द्र आर्य व मिश्री लाल जी का सम्मान किया गया। प्रीतिभोज के साथ कार्यक्रम का समापन हुआ। संचालन श्री राजेन्द्र आर्य व धन्यवाद प्रधान श्री पी. सी. मित्तल जी ने दिया।

### ★शोक संवेदना★

न्यास के अभिन्न श्री भंवर लाल जी गर्ग की सासु जी (श्रीमती सौभाग्यवती जी की माताजी) का देहावसान दिनांक २६ दिसम्बर २०१७ को बेगू में हो गया है। माताजी ने अपने पति के साथ मिलकर परिवार में वैदिक संस्कारों को सुदृढ़ किया। यह उन्हीं के संस्कार हैं कि इस परिवार की नई पौध भी आर्य सिद्धांतों में पगी हुयी है। परमपिता परमात्मा से प्रार्थना है कि दिवंगत आत्मा को अपनी आनन्दमयी गोद में स्थान प्रदान करें।

– भवानीदास आर्य, मंत्री-न्यास, उदयपुर

### दयानन्द मठ, दीनानगर के तत्वावधान में प्रान्तीय आर्य महासम्मेलन

दयानन्द मठ दीनानगर जिला गुरदासपुर (पंजाब) के तत्वाधान में एस.एस.एम. स्कूल झन्गी दीनानगर में १० फरवरी २०१८ को महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के १९४वें जन्मोत्सव पर आर्य महासम्मेलन पूज्य स्वामी सदानन्द सरस्वती जी की अध्यक्षता में बड़ी धूमधाम से मनाया जा रहा है। जिसमें आप सपरिवार सादर आमन्त्रित हैं। कार्यक्रम- १०.०० से १.०० बजे तक, ११ कुण्डीय यज्ञ, ध्वजारोहण, भजन, संगीत, प्रवचन तत्पश्चात १.०० बजे ऋषि लंगर।

निवेदक- एस.एस.एम. स्कूल, झन्गी, दीनानगर

### वेद का मार्ग ही सर्वोत्तम मार्ग– ओममुनि वानप्रस्थी

शान्तिनगर, निम्बाहेड़ा स्थित आर्यसमाज मन्दिर में साप्ताहिक सत्संग में कोटपूतली के वानप्रस्थी ओममुनी ने कहा कि चारों वर्णो के लोगो के लिए वेद में करणीय कार्य बताये गये हैं। उन्होंने कहा कि वेद में ब्राह्मण के वेद पढ़ना-पढ़ाना, सुनना-सुनाना व दान लेना व दान देना छः कार्य बताये गये हैं। इसी तरह क्षत्रिय समाज व राष्ट्र की रक्षा करे, वैश्य धन कमा कर इकट्ठा करे व समय आने पर समाज में बाँटे। शूद्र सेवा कार्य करे। आज मतमतान्तर अधूरा ज्ञान देते हैं। संसार में इंसान के लिए वेद का मार्ग ही सर्वोत्तम मार्ग है। आर्यसमाज के प्रधान विक्रम आंजना ने ओममुनि व आगन्तुकों का स्वागत किया। कार्यक्रम में विरेन्द्र भार्गव, प्रकाश धाकड, मनोज अग्रवाल, बाबूलाल, शिखा शारदा आदि उपस्थित थे। संचालन राधेश्याम धाकड ने किया।

### सत्यार्थ प्रकाश पहेली – १२/१७ के विजेता

सत्यार्थ प्रकाश पहेली के संदर्भ में हमें उत्साहजनक प्रतिक्रियाएँ प्राप्त हो रही हैं। **सत्यार्थ प्रकाश पहेली– १२/१७** के चयनित विजेताओं के नाम इस प्रकार हैं- श्रीमती सरोज वर्मा; जयपुर (राज.), श्रीमती उषा आर्या; उदयपुर (राज.), श्रीमती किरण आर्या; कोटा (राज.), श्री यज्ञसेन चौहान; विजयनगर (अजमेर, राज.), श्री इन्द्रजीत देव; यमुनानगर (हरियाणा), श्री रमेश आर्य; गुरुदासपुर (पंजाब), श्री किशनाराम आर्य बीलू; नागौर (राज.), श्री वासुभाई मगनलाल ठक्कर; बनासकांठा (गुजरात), मीना वासुदेव भाई ठक्कर; बनासकांठा (गुजरात), धर्मिष्ठा वासुदेव भाई ठक्कर; बनासकांठा (गुजरात), श्री जीवनलाल आर्य; दिल्ली, श्री पुरुषोत्तम लाल मेघवाल; उदयपुर (राज.), श्री रमेश चन्द्र गुप्ता; दिल्ली, श्रीमती निर्मल गुप्ता; फरीदाबाद (हरियाणा), श्री सत्यनारायण तोलम्बिया; शाहपुरा (भीलवाड़ा, राज.), श्री हीरालाल बलाई; उदयपुर (राज.), श्री धर्मवीर आसेरी; बीकानेर (राज.), श्री महेश चन्द्र सोनी; बीकानेर (राज.), श्री तुलसीराम आर्य; बीकानेर (राज.), श्री संजय आर्य; सोनीपत (हरियाणा), श्रीमती परमजीत कौर; नई दिल्ली, श्री श्याम मोहन गुप्ता; विजयनगर (इन्दौर, म.प्र.), श्री रमेश चन्द्र राव; मन्दसौर (म.प्र.), श्री उमाशंकर शास्त्री; बेगूसराय (बिहार), श्री स्वामी आनन्द यति; नवाबगंज (बरेली, उ.प्र.), श्री वीरेन्द्र कर; भुवनेश्वर (ओडिशा)। सत्यार्थ सौरभ के उपर्युक्त सभी सुधी पाठकों को हार्दिक बधाई।

**ध्यातव्य– पहेली के नियम पृष्ठ १६ पर अवश्य पढ़ें।**

ओ३म्

Your child's future with indian culture....

## Shivalik Vedic Anglo Residential

# GURUKUL

C.B.S.E. Pattern Only for Boys

आदरणीय बन्धु!

विद्यार्थी जीवन ज्ञान एवं शक्ति के संचय का काल है। बिना यथार्थ ज्ञान के किसी भी प्रकार के सुख की प्राप्ति केवल कल्पना मात्र है। प्राचीन काल में बालक के चहुंमुखी विकास के लिए माता-पिता श्रेष्ठ गुरुओं के कुल (गुरुकुल) में अध्ययन के लिए प्रविष्ट कराते थे, जहाँ सम्पूर्ण विद्याओं का पठन-पाठन एक ही स्थान पर उपलब्ध होने से विद्यार्थी का सर्वांगीण विकास सभंव हो पाता था। कुछ शिथिलताओं के चलते कालान्तर में इसका स्वरूप परिवर्तित होता गया। वर्तमान काल में भी यदि हम अपने बच्चों का एक ही स्थान पर सम्पूर्ण विकास करने का विचार यदि अपने मन में रखते हैं तो वह मात्र गुरुकुल शिक्षा प्रणाली ही हो सकती है। इस चिन्तन को साकार रूप देने के लिए शिवालिक ग्रुप ऑफ इंस्टीट्यूट ने ऋषियों की इस प्राचीन प्रणाली को आधुनिक शिक्षा के साथ सुनियोजित कर छात्रों की सर्वोन्नति के लिए शिवालिक वैदिक एंग्लो आवासीय गुरुकुल (Shivalik Vedic Anglo Residential Gurukul) **"S.V.A.R.G"**. का संचालन प्रारम्भ किया है। जिसमें **:(क).** शिक्षा (आधुनिक शिक्षा पद्वति के साथ-साथ वैदिक धर्म के आलोक में नैतिक शिक्षा द्वारा जीवन-निर्माण।) **(ख).** सुरक्षा (शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक एवं चारित्रिक) **(ग)** संस्कार (शरीर व आत्मा को श्रेष्ठ गुण, कर्म एवं स्वभाव से सुशोभित करना।) **(घ).** सेवा (गुरुकुल में प्राप्त उत्तम गुणों के माध्यम से परिवार, समाज, राष्ट्र एवं विश्व की उन्नति के लिए अपना सात्त्विक योगदान सेवा के रूप में करना।)

माता-पिता परिवार में जिस प्रकार अपने शिशु का लालन-पालन एवं पोषण करते हैं वैसे ही लालित्यपूर्ण वातावरण में आपके बालक के जीवन का निर्माण विद्यालय में अपने विषय के श्रेष्ठतम आचार्यों एवं छात्रावास (आश्रम) में मातृ एवं पितृभाव के साथ सरंक्षकों द्वारा किया जायेगा। वर्तमान व्यस्ततम जीवन में माता-पिता एवं अभिभावकों के पास समय की अनुपलब्धता होने से परिवारों में बालकों के सम्पूर्ण शैक्षिक एवं चारित्रिक जीवन निर्माण कहीं पीछे छूट गया है। हम आपके उन स्वप्नों को साकार करने में आपका सहयोग करने के लिए आपके साथ कदम से कदम मिलाकर कार्य करने के लिए उत्सुक हैं। यह सुनहरा अवसर आपके लिए नवप्रभात लेकर आया है। इसका लाभ उठाएं।

## Features

- Digital Smart Classes • Sms Alert Service
- Lush Green Playground • Eco Friendly Environment
- Activity Cum Learning Room • Experienced & Dedicated Staff
- Special Focus on Moral Values • Special Focus on interaction in English
- Horse Riding & Gun Shooting • Digital & Well equipped Library
- Hi-Tech Computer Labs • Music Room
- **Ultra Modern Fully Airconditioned Hostel with Stern supervision by wardens & CCTV (24x7)**
- **Pure Vegetarian & Authentic Mess with Spotless utensils**

## Co-curricular Acitvities

- Debate • Quiz • Art & Craft
- Painting • Educational Trips
- Meditation, Yoga & Hawan
- Festival Celebrations • Language Lab Activities
- Book Reading Sessions • House Competitions
- Creative Writing • Music & Dance
- Collage Making • MUN Clubs

**Vill Aliyaspur, P.O. Sarawan -133206, Dosarka-Sadhaura Road, Ambala (Haryana),**
**E-mail: shivalikgurukul.ambala@gmail.com, Website : www.shivalikgurukul.com**
**Admission Helpline : 8901054781, 9671228002, 8813061212**

अलसस्य कुतो विद्या, अविद्यस्य कुतो धनम्। अधनस्य कुतो मित्रममित्रस्य कुतः सुखम्।

कथा सरित

# विनम्रता

१९७० के दशक में तिरुवनन्तपुरम् में समुद्र के पास एक बुजुर्ग 'भगवद्गीता' पढ़ रहे थे, तभी एक नास्तिक और होनहार नौजवान उनके पास आकर बैठा। उसने, उन पर कटाक्ष किया कि, लोग भी कितने मूर्ख हैं, विज्ञान के युग में, 'गीता' जैसी ओल्ड फैशन्ड बुक पढ़ रहे हैं।

उसने, उन सज्जन से कहा कि यदि आप यही समय विज्ञान को दे देते तो, अब तक देश ना जाने कहाँ पहुँच चुका होता।

उन सज्जन ने, उस नौजवान से परिचय पूछा तो, उसने बताया कि वो कोलकाता से है और विज्ञान की पढ़ाई की है। अब यहाँ भाभा परमाणु अनुसंधान में अपना कैरियर बनाने आया है।

आगे उसने कहा कि, आप भी थोड़ा ध्यान वैज्ञानिक कार्यों में लगाएँ, 'भगवद्गीता' पढ़ते रहने से, आप कुछ हासिल नहीं कर सकोगे। वे मुस्कुराते हुए जाने के लिये उठे, उनका उठना था कि चार सुरक्षाकर्मी, वहाँ उनके आसपास आ गए।

आगे ड्राइवर ने कार लगा दी, जिस पर लाल बत्ती लगी थी, लड़का घबराया और उनसे पूछा आप कौन हैं?

उन सज्जन ने, अपना नाम बताया, 'विक्रम साराभाई'।

जिस भाभा परमाणु अनुसंधान में लड़का अपना कैरियर बनाने आया था, उसके अध्यक्ष वही थे। उस समय, विक्रम साराभाई के नाम पर १३ अनुसंधान केंद्र थे। साथ ही, साराभाई को तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी ने परमाणु योजना का अध्यक्ष भी नियुक्त किया था।

अब, शर्मसार होने की बारी लड़के की थी, वो साराभाई के चरणों मे रोते हुए गिर पड़ा, तब साराभाई ने बहुत अच्छी बात कही। उन्होंने कहा कि, 'हर निर्माण के पीछे निर्माणकर्त्ता अवश्य है, इसलिए फर्क नहीं पड़ता कि ये महाभारत है या आज का भारत, 'ईश्वर को कभी मत भूलो'!!!

आज नास्तिकगण विज्ञान का नाम लेकर कितना ही नाच लें, मगर इतिहास गवाह है कि विज्ञान ईश्वर को मानने वाले आस्तिकों ने ही रचा है। ईश्वर शाश्वत सत्य है। ईश्वर की वाणी सत्य है, इसे झुठलाया कतई नहीं जा सकता।

साभार- हितोपदेशक

आपकी लोकप्रिय पत्रिका सत्यार्थ सौरभ को सम्बल प्रदान करने हेतु श्री अशोक कुमार वार्ष्णेय, बडोदरा ने संरक्षक सदस्यता (₹११०००) ग्रहण की है। अनेकशः धन्यवाद।

– भवानीदास आर्य, मंत्री–न्यास

आपकी लोकप्रिय पत्रिका सत्यार्थ सौरभ को सम्बल प्रदान करने हेतु डॉ. सत्या पी. वार्ष्णेय, कनाडा ने संरक्षक सदस्यता (₹११०००) ग्रहण की है। अनेकशः धन्यवाद।

– भवानीदास आर्य, मंत्री–न्यास

सत्यार्थ-पीयूष

# ईश्वर सिद्धि

वस्तुतः जिस वस्तु का सम्बन्ध जिस ज्ञानेन्द्रिय से है हम उसी ज्ञानेन्द्रिय से वस्तु को जानते हैं जैसे इत्र का ज्ञान नासिका से, मीठे, नमकीन, खट्टे का ज्ञान रसना से, वायु की उपस्थिति, शीतादि का ज्ञान त्वचा से व शब्द का ज्ञान कर्णेन्द्रिय से करते हैं।

यहाँ यह भी स्पष्ट जान लेना चाहिए कि इन्द्रियगोचर पदार्थ का ज्ञान ही इन्द्रियों द्वारा हो सकता है। अतीन्द्रिय पदार्थ का ज्ञान इन्द्रियों द्वारा नहीं हो सकता परन्तु ऐसा न हो सकने मात्र से इनके अस्तित्व को नकारा नहीं जा सकता। उदाहरण के लिए इन्द्रियों को ही ले लीजिए। इन्हें इन्द्रियों द्वारा तो जाना नहीं जा सकता क्योंकि कोई भी द्रष्टा स्वयं दृश्य नहीं हो सकता और एक इन्द्रिय से दूसरी इन्द्रियाँ भी नहीं जानी जा सकतीं क्योंकि उनके विषय भिन्न-भिन्न हैं।

आँख का विषय 'रूप' नासिका का 'गंध' जिह्वा का 'रस' त्वचा का 'स्पर्श' और कानों का विषय 'शब्द' है। अतः नाक आँख को नहीं जान सकती, जिह्वा कानों को नहीं जान सकती। इन इन्द्रियों को भी इनसे काम लेने वाली चेतन शक्ति अनुभव से जानती है। अर्थात् जब वह रस का ज्ञान जिह्वा से प्राप्त करती है तो उसे रसनेन्द्रिय की जानकारी होती है। इसी प्रकार अन्य

> **जीवात्मा बिना भौतिक इन्द्रियों/भौतिक करणों की सहायता के अष्टांग योग के मार्ग पर चलते हुए, परमात्मा का साक्षात्कार करता है।**
>
> **ईश्वर आँखों से नहीं दिखता-**
>
> **न सन्दृशे तिष्ठति रूपमस्य न चक्षुषा पश्यति कश्चनैनम्।**
> **हृदा मनीषा मनसाभिक्लृप्तो य एतद्विदुरमृतास्ते भवन्ति।।**
>
> - कठोपनिषद् षष्ठी वल्ली/६

इन्द्रियों के विषय में है। यही अनुभव इन्द्रियों का प्रत्यक्ष है। ठीक इसी प्रकार उस परमेश्वर का रूप नहीं है, कोई भी उसको आँखों से नहीं देख सकता, हृदय से या मन से ही उसका दर्शन होता है।

महर्षि दयानन्द जी सत्यार्थ प्रकाश के सप्तम समुल्लास में स्पष्ट लिखते हैं- 'और जब जीवात्मा शुद्ध होके परमात्मा का विचार करने में तत्पर रहता है, उस को उसी समय दोनों प्रत्यक्ष होते हैं। जब परमेश्वर का प्रत्यक्ष होता है तो अनुमानादि से परमेश्वर के ज्ञान होने में क्या सन्देह है? क्योंकि कार्य को देख के कारण का अनुमान होता है। (सत्यार्थ प्रकाश, सप्तम समुल्लास, पृष्ठ १८१) इन्द्रिय-प्रत्यक्ष को ही सर्वोपरि अधिमान देने का आग्रह करने वाले मनीषियों को यह भी ध्यान रखना चाहिए कि इन्द्रियों से गुणों का प्रत्यक्ष होता है न कि गुणी का। ऋषि लिखते हैं- 'अब विचारना चाहिये कि इन्द्रियों और मन से गुणों का प्रत्यक्ष होता है, गुणी का नहीं। (सत्यार्थ प्रकाश, सप्तम समुल्लास, पृष्ठ १८०)। इसका तात्पर्य यह है कि इन्द्रियों द्वारा अपने अपने 'विषय' की सूचना ही मन को प्रेषित की जाती है। उदाहरण के तौर पर एक व्यक्ति खस के शरबत का सेवन करता है तो रंग व तरलता की सूचना आँख द्वारा, गंध की सूचना नाक द्वारा, ठण्डे होने की सूचना त्वचा द्वारा व मीठा होने की सूचना जिह्वा द्वारा मन को प्राप्त होने पर बुद्धि द्वारा समवेत रूप से विश्लेषण करने पर पूर्वस्मृति के आधार पर 'खस के शरबत का प्रत्यक्ष कर लिया' ऐसा कहा जाता है। वस्तुतः प्रत्यक्ष तो भिन्न-भिन्न गुणों का ही हुआ है गुणी का नहीं। अगर यहाँ शरबत पीने वाले ने पूर्व में कभी इस पेय पदार्थ को नहीं पिया हो, इस पीने की कोई स्मृति उसके पास न

हो तो वह इतना मात्र ही कहेगा कि यह तरल पेय पदार्थ जो अमुक रंग का है, मीठा, शीतल, स्वादिष्ट है। और मेजबान से पूछेगा कि यह क्या है? अर्थात् गुणों का प्रत्यक्ष होने पर भी गुणी का प्रत्यक्ष न हुआ। होता यह है कि गुण-गुणी का समवाय सम्बन्ध होने से गुणों के साथ गुणी का प्रत्यक्ष मान लिया जाता है। मन की आशुगति के कारण यह प्रक्रिया इतने वेग से होती है कि हम गुणी का ही प्रत्यक्ष अनुभव करते हैं।

सत्यार्थ प्रकाश के सप्तम समुल्लास में ऋषि दयानन्द स्पष्ट लिखते हैं- 'जैसे चारों त्वचा आदि इन्द्रियों से स्पर्श, रूप, रस और गन्ध का ज्ञान होने से गुणी जो पृथिवी उस का आत्मायुक्त मन से प्रत्यक्ष किया जाता है, वैसे इस प्रत्यक्ष सृष्टि में रचनाविशेष आदि ज्ञानादि गुणों के प्रत्यक्ष होने से परमेश्वर का भी प्रत्यक्ष है।'(सत्यार्थ प्रकाश, सप्तम समुल्लास, पृष्ठ १८०)

- अशोक आर्य

HOT HAI BOSS
Dollar
ULTRA
THERMALS

ऐश्वर्य की कामना करनेहारे मनुष्यों को योग्य है कि सत्कार और उत्सव के समय में भूषण, वस्त्र और भोजनादि से स्त्रियों का नित्यप्रति सत्कार करें।

–सत्यार्थ प्रकाश पृष्ठ ९६

स्वत्वाधिकारी, श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास, उदयपुर की ओर से प्रकाशक, मुद्रक अशोक कुमार आर्य द्वारा चौधरी ऑफसेट प्रा. लि., 11/12 गुरुरामदास कॉलोनी, उदयपुर से मुद्रित
प्रेषण कार्यालय- श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास नवलखा महल गुलाबबाग, महर्षि दयानन्द मार्ग, उदयपुर-313001 से प्रकाशित, सम्पादक-अशोक कुमार आर्य
मुद्रण दिनांक- प्रत्येक माह की ३ तारीख | प्रेषण दिनांक- प्रत्येक माह की ७ तारीख | प्रेषण कार्यालय- मुख्य डाकघर, चेतक सर्कल, उदयपुर